

શ્રી વિદુલેશ્વરવિરચિતં

॥ શ્રીગોકુલાષ્ટકમ્ ॥

(શ્રીહરિરાયણકૃત પ્રજ્ઞાપા ટીકા)

[ગીતસંગીતસાગર શ્રીમદ્વિદુલેશ પ્રભુચરણ શ્રીગુણાંકુલાં અનેક અંશરતો પેટી
શ્રીગોકુલાષ્ટકમ્ પણ એક સુમધુર ભાવકૃતિ છે. પુષ્ટિમાર્ગીય વેખ્યવોને આ મુલ અંશનો આશય
અર્થતાથી સમજાય તે માટે મહાનુભાવ શ્રીહરિરાયણએ તેના ઉપર પ્રજ્ઞાપામાં એક લઘુ ટીકા લખી
આ ટીકા સાથે મૂલ અંશ અત્ર પ્રકાશિત કરતાં અત્યંત આનંદ થાય છે.

શ્રીકાકોરણાં શ્રીમદ્ગોકુલસંબંધી ૩૨ નામોની વિશદતાપૂર્વક વ્યાખ્યા કરતો આ ટીકાઅંશ, અમને
ગો (ગુજરાત) માંથી પરમભગવદીમા મરનદી શ્રી. મણિપદ્મને અને શ્રી. શારદામહેન પાસથી પ્રાપ્ત
જોય છે. તેમને તે કામવનમાંથી મળેલ છે. આ ટીકાઅંશની પ્રતિલિપિ કરતાં ૩૦મા નામની ટીકા, શકિ-
વતી અનવધાનતાથી કે ગમે તે કારણે, આમાં લખવાની રહી ગયેલી. લખતી વખતે આ કુટીનું અમને
સુદુઃખ થયેલું. ત્યારે તે એક ૩૦ મા નામ સિવાયની સંપૂર્ણ ટીકા લખી લીધી. પરંતુ ભગવત્સંબંધી
અર્થ ભગવાન જ સિદ્ધિ કરાવે છે. વસોથી વડોદરા જતાં, પ. ભ. શ્રી. વિજયામહેન ગળગરને ત્યાંથી
જામની હસ્તપ્રતમાંથી એ નામની ટીકા મળી આવતાં, તેને પૂર્ણપણે, આ ભાવસાહિત્ય-અંશમાં મુદ્રિત
કરી, પ્રેમી પાઠકોના વાચન-મનન માટે પ્રસિદ્ધ કરીએ છીએ.

—સંપાદક]

તહાં પ્રથમ એક શ્લોક સોં શ્રીઆચાર્યંણુ ઓર શ્રીગુણાંકુલ કોં નમસ્કાર કરતે હેં-

નોમિ સ્વાચાર્યસર્વસ્વં લીલાહૃદયપૂરિતમ્ ।
નોમિ શ્રીવિદુલપ્રમુખદરેણુમહાનિધિમ્ ॥

અબ શ્રીહરિરાયણ કહત હેં એ હે શ્રીઆચાર્યંણુ ! મેં તુમકારે ચરણમલ કોં
વારંવાર પ્રણામ કરત હોં. કહેતે, મેરે તો તુમ હી સર્વસ્વ હો; ઓર કોલિ નાહી. ઓર
હે શ્રીઆચાર્યંણુ ! તુમ કૈસે હો ? જિનકે હૃદય મેં શ્રીકાકુરણ કી લીલારૂપ ને મહાજંભીર
સમુદ્ર, સો રસ સોં પૂર રહે હો. સો અમૃતરસ કે પાન કરવે કે ચોબરસરૂપ શ્રીગુણાંકુલ
પ્રમદ બયે હેં. સો આપ અનુભવ કરિ સબન કે સેવક ને પુષ્ટિમાર્ગીય તિનકોં, જા ભાંતિ
શ્રીઆચાર્યંણુ જાન કિયે, તાહી-ભાંતિ સબન કોં, જાન કરત હે. એસે પરમકૃપાલુ શ્રીગુણાંકુલ
હે. તિનકે ચરણમલ કોં મેં વારંવાર નમસ્કાર કરત હોં.

યા હી આશય તે 'શ્રીગોકુલાષ્ટક' કી ટીકા અપની પુદ્ધિ અનુસાર કરત હોં. કહેતે,

यामे श्रीगोकुलसर्वभूषी श्रीठाकुरल के उर नाम है, सो रसात्मक भावात्मक सभ है ताते न्यारे न्यारे नाम के वखुन करते है.

अब प्रथम श्लोक कहत है.—

श्रीमद्गोकुलसर्वस्व श्रीमद्गोकुलमण्डनम् ।

श्रीमद्गोकुलहकारा श्रीमद्गोकुलजीवनम् ॥ १ ॥

अब प्रथम यह नाम कहत है— १) श्रीमद्गोकुलसर्वस्वम् । ता नाम में यह आशय है जे श्रीगोकुल जे है-धोष, ताके सर्वस्व श्रीठाकुरल है. ताते यह नाम के सकेत में वह बनने. गोकुलेश, गोकुलनाथ गोकुलधाश धत्यादिक श्रीठाकुरल के नाम है. और श्रीठाकुरल के गाय बहुत ही प्रिय है. सो श्रीगोकुल में बहुत ही है. और संध्यासभय श्रीठाकुरल गाय बरायके, गाय दैके श्रीगोकुल में आवत है. तब भरिक में आप गोदोहन करत है. तहां प्रबलजतन डू गायदुहामन के भिस करके परिक में आवत है. तहां श्रीठाकुरल सेां प्रबलजतन के संयोग होत है. ताते श्रीगोकुल प्रबलजतन के, श्रीठाकुरल के अत्यंत प्रिय है.

और श्रीगोकुल कैसो है ? जहां बालबीला तो प्रसिद्ध है. जिनके अंतरमें किशोरबीला, रासादिकबीला सो डू है. जैसे आदिवृंदावन में रासादिक बीला विहारबीला प्रसिद्ध है, तहां अंतर में गोप्य बालबीला डू है. लभवदीय जाये है—‘गिरिधरलाव पालने जुदे’ कहते, कहां गिरिधरलाव, कहां पालना ? तैसे ही पालना में श्रीगुसांथल कहे है—‘मार्जनीमानहरणम् । श्रीयशोदाल पलना जुवावति है’, ता ही समय में प्रबलजतन सेां सगरी बीलाके अनुभव जनावत है. ताते ‘श्रीमद्गोकुलसर्वस्वम्’ कहे.

श्रीगोकुल में यशोदाघाट है. तहां बालबीला प्रसिद्ध है, और श्रीगोकुलमें ठकुरानी घाट है, तहां दानबीला मुख्य है. ताहीते श्रीगुसांथल दानबीलायूधाधिपति श्रीयंद्रावली है. ताते श्रीठकुरानी घाट उपर श्रीगुसांथल बैठते, संध्या करते, बीला के अनुभव करते. सो ‘दानबीला’ श्रीगुसांथल वखुन किये. तामें अपुनो स्वरूप जाताये है—मुदा चन्द्रावल कुसुमशयनीयादि रचितुं. ताते यह भाव ते श्रीठकुरानीघाट ‘दानबीला’ के डिकाने है. और गोविंदघाट है, तहां श्रीस्वामिनील और श्रीयमुनाल के नित्यविहार की कीर है. ताते श्रीआचार्यल महाप्रभु गोविंदघाट विश्राम करते, संध्यावदन करते. और रसबु स्थल है. तामें प्रसिद्ध है जे श्रीयशोदाल के घर के आंगन है तहां बालबीला डू कहे है. और श्रीगुसांथल ‘श्रीयमुनापटपटी’ में कहे है जे—हमोचरः कृष्णविहार एव । जे जे रासादिक बीला, नित्यविहार होत है, सो अधिकारी विना अनुभव न होय. ताते श्रीगोकुल में सर्व बीला श्रीठाकुरल करत है. याही ते श्रीआचार्यल महाप्रभु ‘यमुनाश्लोकी’ में कहे है—श्रीगोकुलेश्वरपादयोः स्मरणं भजनं चापि न स्याज्यमिति मे मतिः । ताते श्रीगोकुल परम रसरूप ही है. याहीते ‘श्रीमद्गोकुलसर्वस्वम्’ यह नाम कहे.

अब इसरो नाम कहत है—(२) श्रीमद्गोकुलमण्डनम् । यह नाम में यह भाव है

'मठन' शोभा और रक्षा करिबे के नाम है। श्रीठाकुरल श्रीगोकुल की शोभा रूप है श्रीगोकुल की रक्षा करत है। सो तो प्रसिद्ध ही श्रीभागवत में कहे हैं, जो पूतना ककटासुर, तृष्णावर्त' इत्यादिक सब विघ्न हरि करिके' लक्ष्मणके सब मनोरथ सिद्ध करत है, लक्ष्मणकी शोभा भटावे है। अथवा श्रीगोकुल है सो लक्ष्मण है। सो सभन की शोभा रक्षा में तत्पर रहे। कहेंते, अनेक प्रबलकत श्रीगोकुल में रहत है, और जाय ह रहत है, तिनकी रक्षा श्रीगोकुल करत है। ताते 'श्रीमद्गोकुलमठनम्' यह नाम कहे।

अथ (३) श्रीमद्गोकुलदत्तारा यह तीसरा नाम है, ताके भाव यह है जो श्रीगोकुल के नेत्ररूप श्रीठाकुरल है। अथवा श्रीठाकुरल के नेत्रन में जो श्याम तारा है, लक्ष्मणकी पूतरी कहत है, सो बहुत प्रिय होत है। पलक, जिनकी अष्टप्रहर रक्षा करत है। सो श्रीठाकुरल के जैसे नेत्रन की पूतरी प्रिय है, ता ही भाँति सो श्रीगोकुल प्रिय है। कहेंते, भागवत्स्वरूप ही है।

तहां केअ पूर्वपक्ष करे जो नेत्र तो प्रिय होय; परन्तु श्री गोकुल में कहां अधिक है जो नेत्रवत् प्रिय कहे ?

तहां कहत है जो श्रीगोकुल में श्रीस्वामिनील अपुनो नूथ बिये गिराजत है, और श्रीयमुनाल अपुनो नूथ बिये गिराजत है। सो गीत'न में कहे है - 'श्रीगोकुल के निकट बहुत हो, लहरन की छणी आवे।' ताते श्रीयमुनाल तो सब लीला में अंतरंगी। धनसों भिविके' सब लीला होत है। सो वे दोड स्वरूपके श्रीठाकुरल जनत है जैसे अपने नेत्रन की रक्षा पलक करत है, तैसे धन दोडन के भाव की रक्षा श्रीठाकुरल करत है। ताते 'श्रीमद्गोकुलदत्तारा' यह तीसरा नाम कहे।

अथ चौथो नाम कहत है - (४) श्रीमद्गोकुलजीवनम्। ताके अर्थ यह है जो श्रीगोकुल के लवनप्राण, श्रीगोकुल के सुभदायक श्रीठाकुरल है। कहेंते, 'श्रीमद्भागवद्गीता' में सभ ठीर यही कहे है जो 'जहां मेरे लक्ष्मण रहत है, तहां मैं सदैव रहत हों।' तहां ते' ओक क्षण हू आहिर नांही रहत, ताते श्रीगोकुल में तो सभ लक्ष्मण की यूसामधि मन्त्रलक्ष्मण इत्यादिक है, ताते श्रीठाकुरल के लवन होय, यामें कहां कहेनो ? लक्ष्मण के लवन श्रीठाकुरल, श्रीठाकुरलके लवन लक्ष्मण है। ताते 'श्रीमद्गोकुललवनम्' यह कहे।

या प्रकार चार नाम के निरूपण लयो। अथ दुसरा श्लोक कहत है -

श्रीमद्गोकुलमात्रेशः श्रीमद्गोकुलपालकः ।
श्रीमद्गोकुललीलविधः श्रीमद्गोकुलसंभवः ॥२॥

अथ यह नाम कहे - (५) श्रीमद्गोकुलमात्रेशः। या के अर्थ यह है जो श्रीगोकुल में आश्रयरूप पूर्णपुरुषोत्तम है, तिनके आश्रय सगरो जगत है, यह भाव करिके जो श्रीगोकुल के आश्रय करत है, तिनके कालादिक अनेक प्रकार के क्लेश सो नांही होत। कहेंते, श्रीगोकुल भूलभूत है, जहां श्रीठाकुरल सदैव ओकरस लीला करत है। जैसे श्रीगोकुलभीय के आश्रय करने, ताते 'श्रीमद्गोकुलमात्रेशः' कहे।

अथ (६) श्रीमद्गोकुलपालकः । यह पक्ष नाम में यह भाव है जो श्रीगोकुल श्रीगोकुल के पालक है अथवा जो एव श्रीगोकुल के आश्रित है, तिन हूँ का पालन करत है, इनके दुःख में आप हूँ दुःख पावत है इनके सुख में आप सुख पावत है, और श्रीगोकुल में भक्त है, तिनको श्रीगोकुल पालन करत है, जहां श्रीगोकुल वरषु-कमल परत है, तहां अत्यंत कामल नवनीत समान पृथ्वी करि देत है, और श्रीगोकुल का नैसो, ल सुभय, मनोरथ होत है, तैसो ही तहां कूल, इल, सामग्री नाना प्रकार की सिद्ध करि देत है, और एव मात्र ही रक्षा करत है, सो श्रीभगवत में कहे है 'ज 'प्रसा सृष्टि के कर्ता है, महादेव संहारकर्ता है, और विष्णु पालनकर्ता है,' तैसे ही श्रीगोकुल अपने एव के कौटि कौटि अपराध क्षमा करि इनको पालन करत है, ताते श्रीगोकुल भगवत्स्वरूप ही है, ताते 'श्रीमद्गोकुलपालकः' कहे.

अथ आगे कहत है- (७) श्रीमद्गोकुललीलाग्निः । यह सातमें नाम में भाव है जो श्रीगोकुल के लीलाकर्ता, विहारकर्ता श्रीपुरुषोत्तम, जिनकी लीला सर्व अवतारस्व में अधिक है, श्रीपुरुषोत्तम की लीला में कछु हूँ अधिक नांहीं, और अवतार में अयांसासहित लीला किया है, तैसे श्रीनृसिंहप्रसन्न होय के प्रह्लाद की रक्षा किये और श्रीरामचंद्रप्रसन्न होय के रावणादिक दुष्ट मारिके देवतान की रक्षा किये और अयोध्यावासीन के महा सुख किये, जोकपत्नीप्रत वेदमयांसासहित लीला किये, और श्रीगोकुल में तो श्रीपुरुषोत्तम प्रसन्न होय के अमयांसा लीला किये, साधन नांहीं, जैसे गोपीजन के स्वरूपानंद के अनुभव कराये है, ताते श्रीगोकुल के उपरांत और लीलाग्निस्वरूप अपार लीला-रस है, यह नामके भाव में 'श्रीमद्गोकुललीलाग्निः' कहे.

अथ आठमें नाम कहत है- (८) श्रीमद्गोकुलसंशयः । यह नाम में यह भाव है जो श्रीगोकुल का आश्रय करे, तिनके मनके जो संहैह नाना प्रकार का है-अविश्वास है, ताके द्वार करिके काम, कोष, लाल, मद, मोह, मत्सर ताके नाश करिके, भगवत्संभय करावे, और जहां तांछ एव के संशय है, तहां तांछ कौटिन साधन करे, परंतु इल नांहीं, काहेते, अविश्वास आसुरावेश है, सो आसुर के भगवत्संभय न होय, ताते जहां अविश्वास भयो, तहां ताके कियो सर्व वृथा होय जय, सो 'भगवद्गीता' में कहे है- संशयात्मा विनश्यति । ताते संशय अकि, श्रीगोकुल में श्रीगोकुल नित्य विहार करत है, यह भाव में भजन करने, ताते 'श्रीमद्गोकुलसंशयः' कहे

अथ तीसरे श्लोक कहत है-

श्रीमद्गोकुलजीवात्मा श्रीमद्गोकुलमानसः ।

श्रीमद्गोकुलदुःखघ्नः श्रीमद्गोकुलवीक्षितः ॥३॥

अथ यह नवम नाम कहत है जो (९) श्रीमद्गोकुलजीवात्मा । ताके अर्थ यह जो तैसे इंद्रिय के प्रति प्राणु है, तैसे श्रीगोकुल इंद्रियरूप के प्राणुवत श्रीगोकुल है, तैसे आत्मा और एव जो है, तिनके आश्रय में देह, इंद्रिय सम है, सो समग्र में सुभिया है, काहेते, इंद्रिय जोकदोष जय तो ता बिना निवांछ होय; और एव देह

आदिर होय तो इंद्रिय आयुही ते' शिथिल होय जय. सो लव कों सुभ तो परमात्मा
 'और कडू' नांही'. और जहां जय तहां दुःख-कलेश पावे. तैसे ही और जो पृथ्वी
 'पर तीर्थ' है, सो सब श्रीगोकुलकी इंद्रिय है. तिन सभन के (सभ तीर्थन के) शिरोमणि
 श्रीगोकुल है, और परमात्मा श्रीठाकुरल. ताते' श्रीगोकुल सभ ते' मुख्य है. अक्षर के
 अक्षर ही है. जमे' श्रीठाकुरल गिराजत है. सो नारदल ध्रुव सेां कहे है' जे' 'तुमको
 मति उत्तम हीर भतावत है. और हीर तो अनेक काल मे' श्रीठाकुरल प्रसन्न होय;
 और जो यह मथुरामंडल है, तहां योरे ही काल मे', योरे ही साधन मे' जरी सिद्धि
 होय है. यह श्रीठाकुरल के घर है. ताते' यह भाव सेां अपने प्रानप्रिय यहां गिराजत
 है. ऐसे विचारिके' श्रीगोकुल मे' रहत है, तिनके' सब मनोरथ श्रीठाकुरल सिद्ध करत
 है, ताते' 'श्रीमद्गोकुलशास्त्रा' यह नाम कहे.

और डू कहत है—(१०) श्रीमद्गोकुलमानसः । ताके' अर्थ यह है जो श्रीठाकुरल व्यापि
 कृष्ण सेां लीला करिबे के लिये श्रीगोकुल पधारै है. अरु मजवासी की स्तुति इंद्रादिक,
 ब्रह्मादिक, शिवादिक करत है. और यहां के वास की वांछना करत है' जे' 'हम मज मे'
 मजवासी न लये. श्रीठाकुरल के संग रहने.'—जैसे अत्यंत लडाई करत है. और
 श्रीगोकुल मे' रहिके' मनको सहन करने. और जो लवभात्र अपने मन सभ हीर सेां
 छुडाई के जोक श्रीठाकुरल मे' लगावे है, तिनको सभ रसानुभव होयगो. कहेते', जहां-
 लार्थ यह मन अविद्या के गुण सेां मिश्रित होय रह्यो है, तहांतांछ दुष्ट दुष्पुद्गि करि,
 दुष्ट किया सम करत है तहांतांछ कष्ट भगवत्संभंध सूजत नांही. ताहु मे' दुष्ट किया
 तो नांही छूटत. और मन मे' यह वस्तु के दुःख है जो प्रभु भोकां दुःख स्वभाव ते' कय
 निवृत्त करेगे? जैसे मनमे' प्रभु सेां विरक्ति करे तो श्रीठाकुरल अपनी रक्षा के लिये
 मजमे' सहा ही गिराजत है. सो दुष्ट स्वभाव कों छुडाई के' सेवोपयोगी अलौकिक देह
 करि स्वर्दानुभव करावत है. ताते' यह नाम कहे—'श्रीमद्गोकुलमानसः'

अथ और डू नाम कहत है—(११) श्रीमद्गोकुलदुःखजः । यह नाम के' यह भाव
 है जो श्रीठाकुरल श्रीगोकुल के जितने दुःख हैं तिन सभन के हतां है. तथा श्रीगोकुल
 मे' जो मजलगत है, सो श्रीठाकुरल ते' गिहुरे ते' अत्यंत दुःख करिके' संतप्त होत है
 तिनकी आति' देपिके' श्रीठाकुरल उनसेां भक्ति के' सकल दुःख की निवृत्ति करत है.
 अथवा मजलगतन के विरह करिके' श्रीठाकुरल दुःखी होत है, तत्र श्रीगोकुल धन होजिन
 के' संयोग कराय संकेत सिद्ध करि सभ दुःख करत है. ताते' श्रीठाकुरल और भक्तन
 के' दुःखहतां श्रीगोकुल है. ताते' जो कोज श्रीगोकुल मे' रहिके' श्रीठाकुरल के भिदिये
 के' दुःख करत है, तिनकेां श्रीगोकुल, श्रीठाकुरल के' संयोग करावत है.

यह नाम मे' यह जताये जो विप्रयोग दुःख बिना संयोगरस की प्राप्ति नांही.
 और श्रीगोकुल लव के लौकिक-अलौकिक सभ ही सिद्ध करत है. जिनकेां लौकिक दुःख
 है. तिनकेां लौकिक प्राप्ति है. जिनकेां अलौकिक दुःख है, तिनकेां अलौकिक प्राप्ति है. सो
 श्रीगोकुल लवभात्र केां रंभक दुःख देपि नांही' सकत. ताते' श्रीठाकुरल केां श्रीगोकुल
 अत्यंत प्रिय है. ताते' यह नाम कहे—'श्रीमद्गोकुल-दुःखजः'

अम आग्ने नाम कहुत है—(१२) श्रीमद्गोकुलवीक्षितः । यह नाम के। यह अर्थ है जे वीक्षितः नाम रक्षितः । और वीक्षितः नाम दष्टि. याके अर्थ यह है जे श्रीगोकुल और श्रीठाकुरल की कृपादष्टि है. श्रीगोकुल की रक्षा श्रीठाकुरल करत है. और श्रीठाकुरल माय वरायवे कें पधारत है. अष्टप्रहर पशु, पक्षी, वृक्ष समन की रक्षा श्रीगोकुल करत है. काहेते, श्रीशोदाल पृथ्वी के रूप है. तिनके भीतर मज के संघ है. सो यशोदाल रूप होय के मज की भूमि, श्रीठाकुरल की रक्षा करत है. अग्नि ते, जलते, वृषल ते, समयसमय में, भूष में, ध्यास में अपने सब देह के मुष् छोड़िके निरंतर श्रीठाकुरल के सेवा-मुष् कें भवारनो. ल करिके श्रीठाकुरल प्रसन्न होय के अपने माहात्म्य जनावे. यह जतायवेके लिये यह नाम कहे-‘श्रीमद्गोकुलवीक्षितः’.

या प्रकार तीन श्लोक के निरूपण लयो. अम और हू कहुत है—

श्रीमद्गोकुलसौन्दर्यं श्रीमद्गोकुलसफलम् ।

श्रीमद्गोकुलगोप्राणः श्रीमद्गोकुलकामदः ॥ ४ ॥

अम और हू नाम कहुत है—(१३) श्रीमद्गोकुलसौन्दर्यम् । यह नाम में यह भाव है जे श्रीगोकुल के शोभा रूप-आभूषण रूप श्रीठाकुरल है. श्रीगोकुल की जितनी मठाई. स्तुति वेद-पुराण-शास्त्र सब करत है, सो श्रीठाकुरल के पधारते करत है. और श्रीगोकुल सहज ही में सुंदर है. जैसे कोळी ली जिना रूप की होय, ताके बहुत आभूषण-वस्त्र पहरेलये तो हू लोग लयो न कहे. काहेते, वस्त्र-आभूषण की शोभा हू लय. और जे ली परम सुंदर है, वाके बहुत आभूषण न होय, तो हू शोभा देय. तैसे श्रीगोकुल सहज ही में परम सुंदर है. श्रीयमुनाल और नाना प्रकार के वृक्षसहित पुविन, तहां पूष-पुरुषोत्तम लक्ष्मण सहित गिराजत है. सो श्रीगोकुल के सौंदर्य जनने. ताते श्रीमाचार्यल, श्रीगुसांथल सदा श्रीगोकुल में गिराजत है. सदा मज ही में करत विहार-या प्रकार अनुभव करिके लगवदीय जाये है—‘श्रीगोकुल सुग सुग राज करो.’ जैसे ही श्रीमाचार्यल महाप्रभु श्रीलामवत की टीका-‘सुभोधिनी’ करिके श्रीगोकुल के सौंदर्य प्रगट कियो. ताते श्रीगोकुल की शोभा श्रीठाकुरल ते है, और श्रीठाकुरल की शोभा श्रीगोकुल ते है. सो यह भाव ते जनने जे श्रीगोकुल में श्रीकाविंदील के तीर श्रीठाकुरल मजलक्ष्मण के संज नाना प्रकारकी लीला करत है. ता करिके श्रीठाकुरल अत्यंत शोभा देत है. जे मजलक्ष्मण कैसे है ? जिनकी लपमा कें गुपती जे ली, सो कोळी नांही. सो लगवदी जाये है—‘सिय प्रलूति जेती जगजुवती, वारि हरि डारे तेरे रूप पर.’ जैसे श्रीस्वामिनील के संज श्रीठाकुरल हू अत्यंत शोभित है. सो श्रीगोकुल की शोभा देणिके लक्ष्मील सहित नारायण अपने वैकुंठ छोड़ि, मज के वृक्ष वृक्ष पत्र पत्र में व्यापि रहे है. ताते यहां की शोभा कहु न लय. देवतान के लोग सब श्रीगोकुल कें देणिके लज्ज कें पावत है. और ल दिन ते श्रीगोकुल में ठाकुरल पधारै, ता दिन ते त्रैलोक की शोभा यहां ही आय रही है. ता दिन ते रंजक हू हाडू के दुःख न लयो. काहेते, घर घर में लक्ष्मी के वास लयो. अपने पति पधारै लानि, लक्ष्मी ने समन के अनुकूल सेवा करी, नंदरायल अपने लंठार सम दूटायो. हरि ज्यों के त्यों सब के लयो. जैसे जगरे मज में श्रीठाकुरल के अनुकूल लक्ष्मण हते, तिनके लयो. ताते श्रीगोकुल में भूपन श्रीठाकुरल

ऐसी सजरा वज्र ही बावात्मक है, परम सुंदर है. ताते 'श्रीमद्गोकुलसौंदर्यम्' यह नाम कहे.
 अथ और इ नाम कहत है- श्रीमद्गोकुलसत्फलम् । या नाम में यह भाव है जे
 श्री गोकुल के पति श्री ठाकुरल है, सो सत्त्व के दान करत है. अपने अरबुदमल के
 संबंध करावत है. और अन्य देवता है, सो उनके आश्रय ते सत्त्व नांहीं होत. जे
 उनके लोक में रहत है. तिन इ के माया के गुणु सो भिखे है. ताते उनकों श्रीठाकुरल
 के संबंध करावत नांहीं. ताते जे केजि स्वर्गलोक की कामना करिके यज्ञदिक, तपादिक,
 होमादिक करत है, अनेक साधन करत है, सो इ पुण्य छीन लये पाछे देवतान के लोक
 में लय है. तहां इ दुःख-कलेश है. सो इ पुण्य छीन लये पाछे इरि संसार में
 अवतार होयके माया के गुणु सो छूटे नांहीं. और श्री गोकुल के आश्रय ते श्रीपूष-
 पुत्रुपोत्तम के संबंध तथ होय, जम श्री आचार्यल और श्री गुसांछल के अरबुदमल
 में भाव होय. तथ ही यह आश्रय होय. सो यह सत्त्व है. जे श्रीठाकुरल के प्रागट्य
 लये पाछे कथ इ यह संसार के दुःख, माया के गुणु परस न करे. ताते यह नाम में
 यह इल कहे जे श्रीगोकुल के संबंध ते श्रीपूषपुत्रुपोत्तम इलइप है, तिनकी बीबा के
 अनुभाव होय. ताते 'श्रीमद्गोकुलसत्त्वम्' कहे.

अथ और इ नाम कहत है- (१५) श्रीमद्गोकुलगोप्राणः । यह नाम में यह भाव
 है जे श्रीठाकुरल श्रीगोकुल के प्राणु है. कहेते, 'गो' नाम गाय के, सो गायन के
 रक्षक श्रीठाकुरल है. गाय प्राणुप्रिय है. गायन की सेवा ते श्रीठाकुरल अत्यंत ही जेजि
 प्रसन्न होत है. ऐसी गाय श्रीगोकुल में बहुत ही सुख पावत है. और 'गो' नाम
 ईद्रियन के प्राणु प्रिय है, कहेते, प्राणु जिना ईद्रियन में चैतन्य नांहीं. प्राणु-आश्रय
 ईद्रियन के है. सो जैसे ईद्रियन है, ईद्रियन के आश्रय प्राणु नांहीं. तैसे ही श्रीठाकुरल
 के आश्रय सजरा श्रीगोकुल, गाय, वज्र है सज्जन के प्राणु आपु ही है. और 'गो'
 नाम पृथ्वी के है. सो पृथ्वीइप श्रीयशे दालु है. तिन इ के प्राणुप्रिय श्रीठाकुरल है.
 अपने प्राणु इ ते अधिक रनेह श्रीयशे दालु के श्रीठाकुरल में है. घर में जे जे पहाय
 है, तिन सज्जन के श्रीठाकुरल में विनयोज करत है. और 'गो' नाम प्राणु इ के
 है. सो प्राणु तिनके कदिये जे प्रसन्न के जेजे-जाने, उन ही का आश्रय करे. और श्रीगोकुल
 में तो पूषपुत्रुपोत्तम सो विराजत है. ताते प्राणु इ के है आश्रय यही है. ताते
 प्राणीमात्र के लवनप्राणु श्रीठाकुरल है. सो श्रीगोकुल के आश्रय जिना श्रीठाकुरल के
 आश्रय न होय. और 'गो' नाम अक्षर इ के है जहां श्रीठाकुरल विराजत है. ऐसी
 अक्षर इ अक्षत है. जितने अक्षत है तिन सज्जन के नाम 'गो' कदिये. ताते अक्षरहीप
 के इहय में सदैव श्रीठाकुरल विराजत है. अक्षतन के प्राणु है. ताते अक्षरहीप की
 सेवा अपने प्राणु जानिके करे तो श्रीठाकुरल की प्रप्ति होय सो अक्षरसिरोमनि वज्र-
 अक्षत है. जिनके लवनप्राणु अक्ष श्रीकृष्णु ही है. सो वज्रअक्षतन के भाव सो सेवा करे,
 और वज्रअक्षतन के अरबुदमल के आश्रय करे तो सर्वानुभाव होय. ताते यह नाम
 कहे- 'श्रीमद्गोकुलगोप्राणुः'

अथ और इ नाम कहत है- (१३) श्रीमद्गोकुलकामदः । यह नाम में यह भाव है
 जे श्रीगोकुल के सर्व मनोरथ पूषकर्ता कामधेनु, कल्पवृक्ष श्रीठाकुरल है. और केजि कहे

ने कामधेनु है, कल्पवृक्ष है, त्रिंतामबि है, सो इ मनोरथ पूरन करत है। तहां कहत है
 ने ये लौकिक कामना पूषुं कता है। ताके पाये ते अत्यंत दुःख होय। कहेते, देवलोक में
 धर्म जहां रहत है, तहां कामधेनु है, कल्पवृक्ष है, और अमृतपान है करत है।
 परंतु अपने राज्य के लिये अत्यंत दुःखी है। सो श्रीभागवत में प्रसिद्ध है। सक्षय के
 लय करि धर्म पुर छोडि, पहाड की कंधरा में लय छिपत है। ताते मनके पाये ते निर्लभ
 नांहीं होत। और श्रीभागवत में जहां स्वयंभूतमबि के प्रसंग है, तहां मबि के दोष
 सो श्रीठाकुरल सों भाव छूटयो। तब श्रीठाकुरल सदेह छुटाये है। ताते ये (कल्पवृक्ष-
 त्रिंतामबि आदि) ने कामना पूरन करत है, तामें अनेक दुःख है। लजपत्संभ छूटे-
 और श्रीगोकुल के कामधेनु, त्रिंतामबि, सुरतनु सब मनोरथ पूषुं कता श्रीठाकुरल है।
 जिनके मिले ते सकल त्रय ताप हरि होत है; स्वर्णपान, अमृत ताके पान होत है।
 सदा अमर होय, ताके दुःख क्लेश कण्डू न होय सो श्रीगोकुल में जैसे त्रिंतामबि
 के आश्रय करे तो निर्लभ होय, सब मनोरथ पूरन होय। ताते यह नाम कहे-
 'श्रीमद्गोकुलकामधेनु'

श्रीमद्गोकुलराकेशः श्रीमद्गोकुलतारकः ।

श्रीमद्गोकुलपद्मालिः श्रीमद्गोकुलसंस्तुतः ॥१॥

अम और इ नाम कहत है- (१७) श्रीमद्गोकुलराकेशः । यह नाम में यह भाव
 है जो 'राकेश' नाम अंद्रमा के है। सो अंद्रमा में यह गुण है जो दिवस में सूर्य सूर्य
 रश्मि के सोपत है, सो अंद्रमा अमृत की वृष्टि करिके सब वनस्पति के पोषण
 सीतल करत है, ताप की निवृत्त करत है-धर्त्यादिक गुण लौकिक अंद्रमा में है, और
 श्रीगोकुल के अंद्रमा श्रीठाकुरल है। सो अलौकिक अंद्रमा है। सो सब विरह-ताप
 संतप्त होत है, तब श्रीठाकुरल अंद्रमाइ अपने अधराभूत के पान कराय सीतल
 करत है। विरह-ताप हरि करत है। और त्रयताप करिके जगत लये लव दुःखी, जो
 श्रीगोकुल के अंद्रमा के आश्रय करत है, तिनके सकल ताप हरि होत है, लजपत्सरस के
 संभंघ होत है और लौकिक अंद्रमा की कला छीन होत है, शापित है। शिशुमार
 के आधीन लकी प्रति है। जितने प्रमान है, तितने ही लवे। अभावस के दिन प्रकाश
 नांहीं। यह लौकिक अंद्रमा में अनेक दोष है, सो श्रीगोकुल के अंद्रमा में नांहीं। यह
 तो सब गुण ही है। जिनके अंतर प्रकाश लये पाछे हरि संसार ताप कण्डू न होय।
 कलादिक के नियामक है। अभांठ प्रकलजतन के संग लीला करत है। श्रीगोकुल
 भूमिइ लो नल, तहां स्थित है और अंद्रमा, कुमुदिनी के सुभदायी है, तैसे न
 यथोदाह, सभा, सब प्रकलजत, गाय, आदि कुमुदिनी, तिनके प्रकाशकता इप
 ताते यह नाम कहे- 'श्रीमद्गोकुलराकेशः'

अम और इ कहत है- (१८) श्रीमद्गोकुलतारकः । यह नाम में यह भाव है
 श्रीगोकुल में जो पूषुं पुरुषोत्तम है, तिनके गुण-भक्तिमा सत्कर्म के आवे नांहीं, श्रीगोकुल
 ही भक्तिमा अपने मन करिके लनिवे में आवे नांहीं। देखिये तो शोभा के पार नांहीं।
 सुनिये तो भावार्थ के पार नांहीं। सो 'पद्मपुराण' में श्रीलजपान कहे है जो श्रीगोकुल

सुख, लक्ष्मीनारायण महा कहेत है, और पार नांही पावत. और 'वाराहपुराण' में
 पृथ्वी से सगरे प्रकृष्टा माहात्म्य कहे. पाछे कहे जे श्रीगोकुल की बीवा
 मे मेरे सामर्थ्य नांही. पुत्रिअनुसार में कहे. ताते श्रीगोकुल की बीवा तके
 वे नांही. और जे केजि इसरे देय में रहिके श्रीगोकुल की बीवा चिंतन करत
 लावप्रदिन विशु कत है, तिनके श्रीगोकुल संसारसिंधु ते तारिके, न्यारे करि,
 जे सन राशि, लीलास के अनुभव करावत है. जैसे अग्निभारिका के
 पुषे तम के संभलाव लये, तम उनके अनेक प्रतिबंध हरि करिके 'रासप' आध्यायी
 अनुसार धनके मनोरथ पूरन किये. तेसे ही श्रीगोकुल के लाव जमे होय,
 मनोरथ सर्वथा पूरन करे. ताते यह नाम कहे- 'श्रीमद्गोकुलतारकः'

अथ और हू नाम कहेत है- (१९) श्रीमद्गोकुलपद्मालिः । यह नाम में यह लाव है
 श्रीगोकुल कमलरूप है, श्रीगोकुल प्रभारूप है. यके सर्व सके भोग करत है.
 कमल के यह रभाव है जे सुते के देजे ते प्रकुलिन होत है और कमल सदा
 में ही रहि, तेसे ही श्रीगोकुल से रस रूप बल है, महा अलौकिक भगवद्वरसरूप,
 हू सुषे नांही. तामे नानाप्रकार के लावात्मक प्रकृत रहत है, जैसे नंद,
 गोकुल, कृष्ण, गोपीजन पुत्रलावमग्न रहत है, सभा भित्रलाव करिके अपने
 ही जे जानत है, जे सज्जलाव में मग्न है. और प्रकृतजन के होय लाव है-
 संयोगरस, प्रेक विप्रयोगरस कहेते, प्रथम विप्रयोग लये ताते संयोगरस
 सिद्धि लये या प्रकार गोपीजन के प्रतिभाव, से ही नानाप्रकार के कमल है. तिनके
 लाव के लोका श्रीगोकुल अनेक प्रभर होय सजन के रस के भान करत है. नंद-
 गोकुल के भावस्वरूप से सुष देत है, सभान के अनेक सुषे गोचारन बीवा
 देत है. प्रकृतजन संग रासादिक बीवा करिके पोठस वर्ष के तरुन होय के
 मनोरथ पूरन किये. जैसे अलौकिक बल, तामे जैसे अलौकिक नानाप्रकार के कमल
 तहां रहत. जैसे अलौकिक प्रभर है, ताते श्रीगोकुल अलौकिक है, ताते यह
 कहे- 'श्रीमद्गोकुलपद्मालिः'

अथ और हू नाम कहेत है- (२०) श्रीमद्गोकुलसंस्तुतः । यह नाम में यह लाव है
 श्रीगोकुल के संग मिटे ही श्रीगोकुल की स्तुति है. से श्रीगोकुल के बहुत ही
 है. कहेते, भक्तसहित श्रीगोकुल की स्तुति है, से श्रीगोकुल के बहुत ही प्रिय
 से 'नामवली' में श्रीआचार्य महाप्रभु भक्तसंबंधी नाम कहे है- नंदनंदन,
 नानंदन, गोपीजनवदरस, प्रकृत. जैसे भक्तसहित स्तुति ते भक्त की कानि
 प्रभु भक्ति ही कृत करत है. से भागवत में प्रसिद्ध ही है. देवस्तुति में, ब्रह्मस्तुति
 वेदस्तुति में. और सजन से मिलि प्रकृतसंबंधी स्तुति हू कहेते, श्रीगोकुल
 भक्तन के रस में मग्न है. से जय प्रकृतजन के संबंध सहित श्रीगोकुल की
 स्तुति करे, तम श्रीगोकुल बहुत प्रसन्न होय, जे मेरे भक्तन के नाम लेत है. ताते
 नाम कहे- 'श्रीमद्गोकुलसंस्तुतः'

या प्रकार पांच श्लोक के निरूपण लये. अथ और हू कहेत है-

श्रीमद्गोकुलसंगीतः श्रीमद्गोकुललास्यकृतः ।

श्रीमद्गोकुलभावात्मा श्रीमद्गोकुलपांशुकः ॥६॥

अथ और डू नाम कइत है-(२१) श्रीमद्गोकुलसंगीतः । यह नाम में यह है जे सुंदर गीत सो ही है, जमे श्रीगोकुल के संबंध है सो संबंध कडा है की लीला विना और गवत है सो कैसे भालत है ? जैसे हादुर अज्ञान करिके है। कहेते, श्रीगोकुल की लीला प्रसिद्ध है, श्रीभगवत आदि जमे श्रीगोकुल के है। जके गान सो, श्रान सो केटन केटि लजन के उदार लये जैसे पद्य प्रथ परंतु कृपा अनुग्रह बिना कहां ते सिद्ध होय ? जब पुष्टिभाज में सरन भगवदीय के संग होय, तब श्रीगोकुल की लीला के अनुभव होय। ताते साधो यही है जे अष्टछाप, औरासी वैष्णव, पुष्टिबीला के गये है। जैसे उत्तम र ताते यह नाम कहे- 'श्रीमद्गोकुलसंगीतः'

अथ और डू कइत है-(२२) श्रीमद्गोकुललास्यकृतः । यह नाम के यह भाव 'लास्य' नाम गीत वाचित्रयुक्त अत्यंत के मल स्नेहभरित नृत्य के है जैसे ज भीन के सहज स्नेह है जब बिना भीन अक क्षण डू रहि सकत नाहीं, तैसे श्रीगोकुल बिना श्री गोकुल अक क्षण डू और हीर नाहीं रहत। गोकुल में स्नेह नृत्य किये ही करत। और अपने लकतन के डू श्रीगोकुल यही शिक्षा करत है 'श्रीगोकुल में स्नेह करे, तब मेरी प्राप्ति होयगी।' कहेते, जहां श्रुति डू मोहित श्रीगोकुल सों भिनती किये। तब श्रीगोकुल यही आशा दिये जे 'जब मैं प्रज में होऊँ, तहां मेरे शृंगाररसयुक्त स्वरूप के अनुभव होयगा।' और अजिंकुल श्रीगोकुल यही आशा दिये जे 'प्रज ही में तुम्हारे यह मनोरथ सिद्ध होयगा। पूषुं'पुडुपोत्तम के प्राणटय होयगा।' या प्रकार करिके सजन के शृंगाररस श्रीपूषुं'पुडु के अनुभव के लपाय गताये। जे प्रजलकत के भाव विना यह रस की प्राप्ति ताते यह नाम कहे- 'श्रीमद्गोकुललास्यकृतः'

अथ और डू कइत है-(२३) श्रीमद्गोकुलजीवात्मा । यह नाम में यह भाव श्रीगोकुल के भावात्मक स्वरूप है वाके भाव सों लजन करे तो श्रीपूषुं'पुडुपोत्तम संबंध होय। जे सदा प्रज के हृदय में भिराजत है, सो स्वरूप महारस रूप है रस पात्र विना न रहे, ताते जब मथुरा ते यह स्वरूप आये, वाके लीनर स्वपद् रहीं। पाछे अक्रूरसंग मथुरा के स्वरूप पधार्यो, तब प्रज के स्वरूप तो में रहीं। परंतु रस रूप स्वरूप पात्र विना न रहे ताते या स्वरूप के पात्र तो न है, ताते प्रजलकतन के हृदय में रहीं। कहेते, जैसे प्रजलकतन के स्वरूप भाव तैसे ही श्रीगोकुल के संबंध ते प्रजलकतन डू के स्वरूप रसात्मक है। ताते भिलि के प्रज में सदा ही प्रज के लयात्मा होय के स्थित है। सों जकां जब प्रज के भावसहित भावना होय, तब वा स्वरूप को अनुभव होय। जैसे पुष्टिभा श्रीआचार्य'ल महाप्रभु प्रजलकतन के भाव सों सेवा की रीति प्रगट करी है, ता श्रीपूषुं'पुडुपोत्तम की प्राप्ति होय। ताते प्रजलकत की भावना सों लजन करे, 'श्रीमद्गोकुललास्यकृतः' यह नाम कहे।

और हूँ कहती हूँ - (२४) श्रीमद्गोकुलपोषकः ! यह नाम में यह भाव है जो
 के पोषक श्रीठाकुरल है। जैसे माताताया पुत्र को पोषण करत है। काहेते,
 में श्रीनंदरायल की गाय रहत है। सो श्रीठाकुरल के बहुत ही प्रिय है। इनके
 हस्त से पोंछत है। भूषी न रहे, वाके ध्यान राखत है। अपने श्रीहस्त से
 है। वेणु मलयके ता द्वारा अमृतस्नान कराय पोषत है। और श्रीगे कुव में
 रहत है, सो अपने घर गुरुजी की लज करिके विरह से जम जम वंत
 तम काहू भिक्ष करिके श्रीठाकुरल के वर पधारि, नेत्र डी में मंदाहास्य करि,
 अनेक भाव करि अताइस लक्षण के प्राणु के पोषक है। और प्रज में जो
 अनुग्रहीत है, तिनके सव प्रकार से पोंछत है। सो 'लज्जितवर्द्धनी' ग्रंथ में
 काहू महाप्रणु कहे है -

“बाधसंभावनायां तु नैकान्ते वास इष्यते ।
 हरिस्तु सर्वतो रक्षां करिष्यति, न संशयः” ॥

काहेते, के लवणुद्धि से द्वेष करत है, अथवा श्रीठाकुरल के को ली जनत नांही,
 को पोषन करत है। तो जो लव श्रीठाकुरल के आश्रय करिके रहे है, तिनके
 का पोषन करे ही करे। ताते यह नाम कहे - श्रीमद्गोकुलपोषकः
 प्रकार के श्लोक के निरूपण लयो। अण और हूँ कहत है -

श्रीमद्गोकुलहृत्स्थानं श्रीमद्गोकुलसंवृतः ।
 श्रीमद्गोकुलहृत्पुण्डः श्रीमद्गोकुलमोदितः ॥७॥

(२५) श्रीमद्गोकुलहृत्स्थानम् । यह नाम में यह भाव है जो श्रीगे कुव के सो है ?
 के हृदयस्थान ही है ताते श्रीगे वर्द्धन, श्रीयमुनाल, प्रजभूमि, वृक्ष सव
 रूप ही है। काहेते, अहा के आशा देके अहा द्वारा सृष्टि प्रगट करी है। सो
 वत तृतीयस्कंध में प्रसिद्ध ही है। और प्रज ही सामग्री सत्र श्रीठाकुरल के हृदय
 ही है। काहेते, लीलासृष्टि की सामग्री में श्रीपुष्पुपुत्रोत्तम के मन करि हृदय
 प्रगट लयो रसरूप, तिनते अनेक स्वरूप लीला मध्यपाती प्रगटे। सो प्रज में
 है। ताते यह नाम कहे 'श्रीमद्गोकुलहृत्स्थानम्'

और हूँ कहत है - (२६) श्रीमद्गोकुलसंवृतः । यह नाम में यह भाव है जो
 श्रीगे कुव ही के संभंधी लीलाके वश है। जो वाता करत है सो श्रीगे कुव की,
 के समुद्र में है जो और कष्ट जनत नांही। और आप 'रासपंचाध्यायी' में
 जो 'मेरो प्राणतय तुम्हारे लिये है, और करण नांही।' ताते श्रीपुष्पुपुत्रोत्तम
 प्रजलक्षण ते वेष्टित होय रहे है, और प्रजलक्षणके लोमनीय है। ताते जैसे
 प्रजलक्षण के भाव है, ताही प्रकार से तैसे ही मनोरथ श्रीठाकुरल पूष करत
 ते यह नाम कहे - 'श्रीमद्गोकुलसंवृतः'

और हूँ कहत है - (२७) श्रीमद्गोकुलहृत्पुण्डः ! यह नाम में यह भाव है जो
 में श्रीपुष्पुपुत्रोत्तम निराजत है, श्रीनंद-यशोदालके घर में। काहेते, जो
 श्रीयशोदाल के माया प्रगट लई है, सो श्रीठाकुरल के प्रगट लये उपशान्त होय

वही पाछे ताते यह अननो जे माया अकेली न लई; श्रीठाकुरलखित प्रगट
 तहां केहि कहे जे क्यो अनिये ? तहां कहत है जे अकेली माया प्रगट लई होती
 माया के उपलये इध श्रीयशोदाए के स्तन में होतो, सो श्रीपूषुपुत्रोत्तम क्यो अंग
 करते ? और श्रीपूषुपुत्रोत्तम के इशान एर कों नाहीं होतो। कहते, एरकों आ
 है। तितनी माया श्रीठाकुरल हरि करे, तितनो इशान होय। प्रज में लकों देसो
 लयो, तिनकों तैसे ही इशान लयो। ताते प्रज कों यह भाव लयो जे पुष्टिपुत्रो
 है, धन ही ते हमारे मनोरथ सिद्ध होयेंगे। सो पुष्टिप्रीता करि, स्वप्नानंद के अ
 प्रजलक्षण कों करायो। ताही ते श्रीमायायंल के घर ही रीत के बलायो। प्रगट हो
 में है अयांदाखित, ताके भीतर पुष्टिभाग-प्रजलक्षण ही रीति-भावना सो प्रगट
 है। ताते लखवदीय गाये है-‘भक्ति श्रीगोकुल ते प्रगट लई।’ ताते श्रीगोकुल के अ
 विना पुष्टिभक्ति न होय। श्रीगुसांईल के वचन है-

सदा सर्वात्मना सेव्यां भगवान् गोकुलेश्वरः ।
 स्मर्तव्यां गोपिकावृन्दे क्रीडन् वृन्दावने स्थितः ॥

और श्रीमायायंल महाप्रबु कहे है-

अतः सर्वात्मना शब्द गोकुलेश्वरपादयोः ।
 स्मरणं भजनं चापि न त्याज्यामिति मे मतिः ॥

जैसे पुष्टिपुत्रोत्तम श्रीगोकुल के धर सरदा विहार करत है। तिनही ते उ
 रस के अनुभव होयगे। ताते ‘श्रीमद्गोकुलदूकपुष्टः’ कहे।

अज कहत है-(२८) श्रीमद्गोकुलमोदितः । यह नाम में यह भाव कहे जे श्रीग
 के आनंददाता श्रीठाकुरल है। जे दिन ते श्रीठाकुरल व्यापिलेकुठ ते प्रज में प
 सो अनेक कालके मनोरथ लक्षण के पूषु लयो। प्रजलक्षण के ताप हरि लयो।
 अपने जन्म के साथे क अनि ताप निवृत्त करत है। ता दिन ते प्रज में घर घर
 के उत्सव आनंद लयो। श्रीगोकुल में श्रीधमुनाए अत्यंत प्रदुखित होय रसकी
 महावत है। और गायन कों अत्यंत आनंद लयो, इधरस अहुत लढयां। ग्याल
 शंभार हरिके ठांवरि हरि हरिके श्रीठाकुरल के इशान करन आवत है। और प्रजल
 आनंद में मज होय, गृहादिक लंधन तोडिके, मंगल साज सिद्ध हरिके श्रीयशो
 के पास आयके श्रीठाकुरलके इशान किये। ताही समय में सर लुपय के भाव
 ताते अत्यंत आनंद पाये। जैसे श्रीठाकुरल घर घर आनंद श्रीगोकुल में देत है।
 यह नाम कहे-‘श्रीमद्गोकुलमोदितः’

जैसे सात श्लोक के निरूपण लयो। अज आठमो श्लोक कहत है-

श्रीमद्गोकुलगोपीशः श्रीमद्गोकुललालितः ।
 श्रीमद्गोकुलमोग्यश्रीः श्रीमद्गोकुलसर्वकृत् ॥ ८ ॥

अज और ६ नाम कहत है- २९) श्रीमद्गोकुलगोपीशः । यह नाम में यह भा
 जे श्रीपूषुपुत्रोत्तम श्रीगोकुल के और गोपीजन के धर है, नाम पति है। श्री
 श्रीगोकुल में अत्यंत सुख दिये, जैसे श्री कों उत्तम पति हरिके सुख है और

अनुभव है, जगत में है; परंतु श्री कों इच्छा सुख नाहीं। तैसे ही श्रीगोकुल
 में श्रीगोकुल है। कहेते। जहांतां व्यापिबैकुंठ ते श्रीगोकुल श्रीगोकुल में नाहीं
 होते। तहांतां अपना महालयप्रवेश श्रीगोकुल ने न जाताये। सो यह पतिव्रत
 में है जो अपनी सुंदरता, अनुग्रह, अक्षिप्राय है सो अपने पति के ही संमुख
 सिद्ध करि देत है। और नाग प्रकार के कुंजसंकेत, श्रीगोकुल और मन्मथजन
 का है। जहां कैसी बीजा, ता बीजा के अनुसार होय। श्रीगोकुल, श्रीगोकुल का
 अंत अनुकूल है। ताते मन्मथजन के, श्रीगोकुल का अत्यंत प्रिय है। ताते यह
 कहे- 'श्रीमद्गोकुलवासी'

अम (२०) श्रीमद्गोकुलवासीः । यह नाम में यह है जो न रीत से श्रीगोकुल
 गोकुल का बालन-पालन करे है। या ही रीत से श्रीगोकुल का बालन-पालन आप
 गोकुल करे है। कंस द्वारा प्रेरित असुरन के उपद्रव के शान्तकर्ता और श्रीगोकुल के
 प्रकृतो आप ही है, और पर कतुन कों भी अपने आधीन रणे है। श्रीप्रभुन की
 अनुसार मग क। आप के अनुकूल होय है। वर्षा, शरद, हेमंत, शिशिर, वसंत
 और श्रीम आदि पर कतु श्रीप्रभुन के आधीन होयके अपने अंगोपांग प्रकृष्टित करे
 'शिवपञ्चाव्यासी' में अंश ही कवा पूर्व रीत से प्रकृष्टित दुर्ध है और शरदकृत
 कर्म है। अंश, मन्मथवासी लये है। श्रीगोकुल, मन्म, श्रीयमुनाल, वन-उपवन सम
 अभय लये है। समस्त मन्मथद्वित्य श्रीप्रभुन के अनुकूल लये है। नम श्रीगोकुल
 मन्म करिये कों श्रीयमुनाल के तीर पे आधार है। तम मन्मथमुंधरा अपने
 में के महता धारन करिके आनंद अनुभव है; श्रीगिरिवालय इव, दूब सिद्ध
 गोकुल धरे है; श्रीमन्मथनः अपने मनोरथ के लोभ श्रीगोकुल कों धरिये के
 सुंदरत में आवे है, ता जिनियां श्रीगोकुल वनकीडा के लिये संकेत करे है,
 जो न लाति ही बीजा करनी है, य. जहां ता लाति के सिद्ध प्रदर्शित करे है। गुमभावना
 श्रीपीठन पिता श्री गोकुल के लिये में आवे नाहीं है या लाति श्रीगोकुल आदि
 गोकुल कों प्रिय जने है। और श्रीगोकुल ते. समन के प्रिय है ही. या लाव के
 में 'श्रीमद्गोकुलवासी' यह नाम कहे.

अम और ११ मन्मथ है- ११ श्रीमद्गोकुलवासीः । यह नाम में यह लाव है जो
 से व्यापिबैकुंठ में मुख्य लक्ष्मी है ताके लोभ नारायण करत है। और श्रीगोकुल है
 साक्षात् व्यापिबैकुंठ है. तहां लोभ श्रीपुष्पपुत्रोत्तम करत है. ताते श्रीगोकुल कों
 लक्ष्मी अपने मन में लक्ष्मी पावत है सो अपने वैकुंठ से मन्मथ में धर धर
 लिये। नारायण सहित सन बीजा होयके मन में अत्यंत प्रसन्न है. सो सदा
 वैकुंठ में परस्पर, लक्ष्मीनारायण सहित मन्मथ ही बीजा के स्मरण करते है. कहेते,
 नारायण आदि तथा और जितने अवतार है, सो केजि शुष्प करिके, केजि कवा करिके,
 श्रीमन्मथ करिके प्रगटे है, सो तैसे ही तिनके लोभ करिये में लोभ लक्ष्मी है, तैसी
 लक्ष्मी है, अथाहासहित. और श्रीगोकुल में साक्षात् पुष्पपुत्रोत्तम बीजा करिये पधार,
 श्रीगोकुल के मन्मथ पुष्प है. मन्मथ साम्राज्य रूप श्रीपुष्पपुत्रोत्तम के लोभमुक्त
 ताते मन्मथ में लो बीजा साम्राज्य है, सो श्रीगोकुल के लिये ही है. श्रीगोकुल,

श्रीयमुना-सो पुष्टमहारास्य, जहां अनेक कुंज, द्रुम, लता, कंदरा, पशु, पंछी तहां अनेक प्रबलकृत परम शोभा देत है. शोभा के दर्शन करिके कामदेव-रति हूँ लोभाय रहे है. और श्रीयमुनाए जहां अत्यंत शोभा देत है. तिनको देखिके श्रीपूषुपुत्रोत्तम लोभाय रहे है, तो तहां लक्ष्मी कौन गिनती ? तातें ने लोग श्रीगोकुल में श्रीक कुल प्रबलकृतन संग करत है. सो द्वारका-राज्यलीला हूँ में नाहीं. सो पुरानन में प्रसिद्ध है. काहेतें वहां सोरह हजार एक सो रानी, और आठ पटरानी जैसे. राज्यस्थित है तातें श्रीगोकुल की बीला प्रबलकृतन हो लाव, यह रस, यह लोग क्यहूँ नाहीं है तातें यह नाम कहे-‘श्रीमद्गोकुलयोग्यश्रीः’

अब आगे और हूँ कहत है-(३२) श्रीमद्गोकुलसर्वकृत । यह नाम में तो अनेक लाव है. काहेतें, सर्व बीला श्रीकुकुल की ह, सो श्रीगोकुल में है. न न अवतार में लगवान प्रगट होय के ने ने बीला किये, सो सर्व बीला, प्रभ में सर्व प्रबलकृतन के अनेक ज्वाल हरि सहज ही में करि दिभाये. तातें प्रबलकृतन सर्वलाव करिके एक श्रीकृष्ण को लखन किये, जेये हमारे सर्व मनोरथ पूषुं करेगे और ने बीला श्रीकुकुल प्रभ में प्रबलकृतन के संग किये. रासादिक, भानादिक, थीरहरन, और निकुंज में नाना-प्रकार की वेदभयांदा के उल्लंघन करिके करी, सो बीला क्यहूँ नाहीं. काहेतें, और अवतार श्रीपूषुपुत्रोत्तम होय तो अभयांदाबीला होय तातें व्यापिवैकुंठ में ने श्रीपूषु-पुत्रोत्तम बीला करत है, सो ही प्रभु प्रभ में प्रगट होय के श्रीयमुनाए के तट पर स्थित होय अनेक बीला करत है. सो बीला सर्वोपरि है. सो श्रीगोकुल में प्रबलकृत है, तिनके अरण्यकमल की रज, ताके आश्रय तें प्र. ११ होय. सो वह आश्रय सिद्ध होयवेकी योग्यता एव में नाहीं. जण श्री आचार्यए महाप्रभु के अरण्यकमल को आश्रय होय, निवेदन लये पाछे योग्यता होय, जैसे श्रीगोकुल सर्व बीला को डिकानो, तातें सर्वलाव करिके श्रीगोकुल की बीला, तिनको चिंतन करनो. सो श्रीआचार्यए महाप्रभु कहे है-
सर्वदा सर्वभावेन भजनीयो ब्रजाधिपः । स्वस्यायमेव धर्मो हि नान्यः क्वापि कदाचन ॥

परमधर्म सर्वोपरि यह है ने प्रभ के पूषुपुत्रोत्तम में लावसहित सर्व बीला को अनुभव करनो. तातें यह नाम कहे-‘श्रीमद्गोकुलसर्वकृत’.

या प्रकार आठ श्लोक को निरूपण लयो. अब ‘श्रीगोकुलाष्टक’ के पाठ को हूँ कहत है—

इमानि श्रीगोकुलेशनामानि वदने मम ।
वसन्तु सततं चैव लीला च हृदये सदा ॥ ९ ॥

यह ने श्रीपूषुपुत्रोत्तम के नाम लीलासहित, श्रीगोकुलप्रबंधी, सो श्रीगुसांठए कहत है ने मेरी वदन ने सुभकमल, तामें सतत ने निरंतर वास करे. काहेतें, मैं सर्वसाधन करिके रहित हों, तातें यह ने नाम है. तिनको मेरी रसना अष्टप्रहर रमरण करे. सो धन नाम ही के चिंतन सों श्रीपूषुपुत्रोत्तम ने बीला श्रीगोकुल में करत है, सो लीलासहित मेरे हृदय में वास करेगे. यह मेकों निश्चय है तातें यह नाम के मैं बार-बार उच्चार करत हों. तामें नाम उर भसीब है. ताके आलभाव यह है ने मेरे

हृदय में यह मनोरथ है जो सब रसन में श्रेष्ठ जो शंभाररस, सो ही बीजासहित, जो श्रीस्वामिनील सहित निकुंज मंदिर में विहार करत है, सो बीजा भरे हृदय में बसे। चोडशकला श्रीपूज्यपुरुषोत्तम रसात्मक तेसे ही चोडशशंभार सहित श्रीस्वामिनील—ये दोल्ले मिलिके' या प्रकार अनेक भाव सों पूष्य, ताते' जत्तीस नाम करिके' यह 'श्रीगोकुलाष्टक' में वर्णन किये. ताते' यह 'श्रीगोकुलाष्टक' में जो नाम है, सो सब बीजासंभंधी है।

ताते' धन नाम के आश्रय ते' सर्व बीजा के अनुभव होयगो, सर्व बीजा सदा ही हृदय में स्थित होयगी. या प्रकार श्रीगुसांथल प्रतिज्ञा करिके' यह 'श्रीगोकुलाष्टक' प्रगट किये. यह कहिके' अपने अंगीकृत सेवकन के यह जताये जो यह 'श्रीगोकुलाष्टक' के पाठ निरंतर करे. और यह ग्रंथ में 'जत्तीस नाम' है, सो परम रसरूप है, तिनके' हृदय में राखे। धन नाम ही के आश्रय ते' पुष्टिबीजा सर्वोपरि जैसे श्रीपूज्यपुरुषोत्तम बीजासहित हृदय में आबके' बसे.

सो श्रीहरिरायल अण कहत है' जो श्रीआचार्यल महाप्रभु और श्रीगुसांथल के अरबकुमल की रज, ताके' नभस्कार करिके' जैसे मेरी पुष्टि में श्रीमहाप्रभुल के अनुभव ते' स्मृति' लभ, सो में कथो. काहेते', यह जो शंभाररसात्मक जत्तीस नामन में अपार भाव है, सो श्रीगुसांथल के हृदयकुमल में स्थित है. सो लव के' प्राप्ति महान दुर्लभ है. ताते' यह 'श्रीगोकुलाष्टक' के पाठ ते' अनेक अविद्या करिके' हृदय में भेद है, तिनके' हरि हरि सर्वात्मभाव होय सो यह प्रताप 'श्रीगोकुलाष्टक' के नाम के है ताते' वैष्णव के' भावसहित यह ग्रंथ के पाठ करने. काहेते', यह श्रीगुसांथल के वचनामृत महा-रसरूप 'श्रीगोकुलाष्टक' है, ताते' गोप्य राखने. ताते' उनकी कृपा ते' जेहि ही इवित होय.

॥ इति श्रीविट्ठलेश्वरविरचितं श्रोगोकुलाष्टकम् ॥
 [ताके ऊपर श्रीहरिरायजीकृत ब्रजभाषाटीका संपूर्ण]

શ્રીમદ્વિદ્યુદેશપ્રભુચરણવિરચિતં

* સ્વપ્નદર્શનમ્ *

અનુવાદક

મ. મ., અધ્યા. શ્રી કેશવરામ કા. શાસ્ત્રી

'વિદ્યાવાચસ્પતિ'

[ગીતામંગીતસાગર શ્રીમદ્વિદ્યુદેશપ્રભુચરણ શ્રીગુરુસંપ્રદાય સંસ્કૃત પ્રકરણ ત્રયોમાં સ્વપ્નદર્શનમ્ નામક આ ત્રય એઓશ્રીની વિશિષ્ટ કાવ્યકૃતિ છે. ગુજરાતી ભાષા-સાહિત્યના સંશોધક અને સંપ્રદાયના માનનીય વિદ્વાન શ્રી કે. કા. શાસ્ત્રીજીની સહજ લેખિની દ્વારા થયેલા સર્વપ્રથમ આ ગુજરાતી અનુવાદને અત્રે પ્રકાશિત કરતાં આનંદ થાય છે. -તંત્રી]

કુસુમધારણ્યાતાહિતદુઃખમિત્રાધુનાન્નસ્વકરકમ્લનલરં વિમ્બતમ્ ।

મકરકુંડલમંદિતગંઢમંદલપ્રભોચોતિતમુવનમયમ્ ॥૧॥

બાણે કે કામદેવના બાણના છેડે દુઃખને મૂકી રાખ્યું છે તેવા બહુબહુતા હસ્ત-કમલના નખ ધારણ્ય કર્યા છે; મકરાકૃત કુંડળોથી શબ્દગારેલાં લમણાંની પ્રભાથી ત્રણે લોકને ઊજળાં કર્યાં છે; (૧)

અતિસુખમકિંચિદુચ્ચિત્તુકં અપરમિવવિજિતધિવમ્ ॥૨॥

અતિસુંદર (અણુક (દારીનો ભાગ) કાંઈક ઊંચો કરેલો છે; લાલચટક નીચલા હોંકથી પાકેલા ગિલોડાને ઝાંખું પાડી દીધું છે; (૨)

નિજવાકૃપીયુવસારિસરસ્વતીભિરિવાનેકરેલામી રંજિતાધરમ્ ।

કનકમુખ્યમિતવુહવતિસુમગામલમુક્તાફલસંશેષમિશ્વાસદ્રોષતિનિતિમશાસાપુટમ્ ॥૩॥

બાણે કે પોતાનાં વચનામૃતોડૂપી નદીરૂપ સસ્સરવીવાળી અનેક રૂપાઓથી નીચલો હોંક રંગાયેલો છે; નાસિકા સોનાના દોરાથી પરોવેલાં આંત સુંદર નિર્મળ મોતીઓથી શોભી રહેતા રૂણસાથી ઊંચી અને નીચી થયા કરે છે; (૩)

કુપિતકુસુમધારણ્યયુગેનેવ શ્રોત્રકૃતામિમગતિપ્રતિબંધજનિતરોષેનેવેવહ્નોહિતેન

ત્રિમુવનવિજકલ્યમેનેવાતિચપલેન

સસરસિજન્મોદ્ભ્રાંતભ્રમરેણેવાતિદયામમખ્યેન

નયનયુગેન દરયં રતિપતિશ્ચરાસનકુટિલભ્રમમ્ ॥૪॥

કોપી ઊઠેલા કામદેવનાં બાણ જેવાં, બાણે કે કાનને કારણે ગતિ થંભાવી દીધી હોય તેથી થયેલાં ક્રોધને કારણે કાંઈક લાલ થઈ ગયેલાં, બાણે કે ત્રણે લોક ઉપર વિજય કર્યો હોય તેથી વ્યથ થઈ ગયેલાં, આંત ચપલ, રસાળ કમગાના ખમથી ભમેલા ભમરા જેવાં જેટ નયનોને લીધે કામદેવના ધનુષના જેવી જેટ ભમર જેવા લાયક થઈ ચૂકી છે; (૪)

પ્રથમં મલ્લજતિલકં મૃગતાંભિજં તદંતરાલે ચ ।

તન્મખ્યેડપિ ચ મુક્તાફલચિતં ત્રિદુમ્બાદપ્તમ્ ॥૫॥

પહેલાં ચંદનું તિલક અને એની વચ્ચે કસ્તૂરીની ટીલી, એની વચ્ચે 'પદ્મ મોતીનું' ટપકું ધારણ કરેલું છે; (૫)

અતિવક્રવનિરચિકુરેરાવૃતવદનાંસુજં સહ્યમ ।

દરહાસવિગલિતામલપરિમલકુન્ધૈરિવ ખમરૈઃ ॥૬॥

અરે ઓ સખીઓ, હાસ્થને કારણે પોતાણુમાંથી નીકળેલા નિર્મળ પરિમલથી લોભા-
યેલા ભમરાઓના જેવા ખૂબ વાંકડાંયા સુદર કેશ વદનકમળ પર પથરાયેલા છે; (૬)

અલકોદ્યથિતકુસુમેરાવૃતવદનાંસુજં રાગૌ ।

રાક્ષાઘીષમિવાસિલ્લનશ્ચૈરાવૃતં ગમને ॥૭॥

આકાશમાં બધાં નક્ષત્રોથી ઘેરાયેલા ચંદ્રમાં જેવાં કેશમાં ખૂંચેલાં ફૂલ રાત્રે વદન-
કમળ પર પથરાયેલાં છે; (૭)

પદ્મરાગપ્રતિમટ્સર્કર્ણિકારરોમિકર્મોપરિમાગં

ગુંજાપુંજસંપલિતર્ષિર્જિર્જોત્પ્રથિતવિવિષમગિજાલ-

મુક્તાફલપ્રકરસંકીર્ણકુસુમાકલગિસ્વરાહિત-

નીલમણ્યુપરિસ્થિતસ્પૂલમુક્તાફલસંરોમિમુકુટવિરાજમાનોત્તમામમ્ ॥૮॥

કાનની ઉપરનો ભાગ પદ્મરાગથી ચડી બાથ તેવાં ગરમાળાનાં ફૂલોથી શોભી રહ્યો છે;
મસ્તક પર ચણેડીઓના સમૂહે બરેલાં મોરપીછથી ખૂંચેલા અનેક પ્રકારના મણિઓની ઉપર
મૂકેલાં મોટાં મોતીઓથી સુગટ શોભી ઊઠ્યો છે; (૮)

વિવિષકુસુમોદ્યથિતસુભગમેચકકેદાપાચં

પવનાનીતાનિજવિવિષપ્રસ્નપ્રકરપ્રસારિપરિમલ-

હુન્ધમધુકરનેકરાકુલવનમાલાધરમ્ ।

ત્રિભંગસંદર્શિતદક્ષિણચરણતલં કરકમલ્કલિતલલિત-

શંશીકલરમેણ વિદ્રાવિતમુનિગણસમાધિ નિશિલ્લુદાવિમિનં,

સમાધિસ્થમાનસીકૃતાસૌપપક્ષિગણં ચિત્રન્યાસીકૃતામિમુચનં

નિજમૂલ્વામોદ્ધમદ્ધમરસાંપ્તપુષ્પશ્રુતિમાનં

રતિપતિજયપતાકામિવ મનોમ્બલિદ્ધમૂલ્યમિવ

તાર્લીયપુમયૈસિદ્ધાંતરહસ્વમિવ નિશ્ચિલનિતંચિનીમનઃસમાકર્ષણ-

મંત્રચિન્મહીભૂષણમણિમિવ વ્રજસૌમાર્થ્યમિવ

મૂર્તિમત્તિમુચનસુપમામિવ ત્રિભંગીનયનચ્ચુઃસાપ્ત્યમિવ

પ્રતિચિન્નિતવિવિષનિકુંજકુસુમેરશિલ્પમુરપૂજિતમિવ

અશિલ્પપુષ્પપુંજમિવાપદ્યમ્ ।

તતઃ પ્રેમાતિભરમનસા સદેહિયરૂપામૃતાન્ધિકપ્રત્યંગતરંમેયુ

ચિરંનિમમ્નનયનમીનયુમલ્લાહમાસમ્

તતસ્તપ્તાપ્તિમાર્ષસમાનાયા નિદ્રા વિદ્રાચિલાચમ્ ।

તતઃ પ્રતિષ્ઠાપ્રવૃદ્ધપ્રચરપ્રેમપ્રોચાસ્પુલ્કસૌકારાહમિરવં બ્યલ્પમ્-

‘હા હા નાથ ધરણ્ય હા હા ગોપીજનાધાર-

હા હા ચુંદાવનભૂષણ હા હા સાનંદાનંદસર્વસ્વ’ ॥૯॥

ક્રાળા કેશનો સમૂહ અનેક પ્રકારનાં ફૂલોથી પૂથેલો હોવાથી સુંદર લાગે છે; પવને લાવી આપેલાં પોતાનાં અનેકવિધ ફૂલોના સમૂહને લઈ પ્રસરી રહેલા પરિભ્રમમાં લોભાયેલા ભ્રમસાઓના સમૂહે હલી જીઠેલી વનમાલા ધારણ કરી છે; જમણા ચરણનું તણું ત્રિભંગ શરીરમુદ્રાથી ખતાવવામાં આન્યું છે; કરકમલથી વગાડેલી લલિત બંસીના કલ સ્વસ્થી સમગ્ર વૃંદાવનમાં મુનિઓના સમૂહોની સમાધિને સ્થાને ઠોડધામ કરાવી મૂકી છે; બધાં જ પક્ષીઓને સમાધિમાં હોય તે પ્રમાણે મનના સંયમવાળાં કરી નાખ્યાં છે; ત્રણે લોકને મિત્રમાં હોય તેમ યાપણના રૂપમાં કરી લીધા છે; પોતાના મુખના સુગંધથી બમતા ભ્રમસાઓના ગણગણાટ-રૂપી ગાન સંભળાયા ઠરે છે; આવા, કામદેવની વિજયપતાકા જેવા, કામદેવની સિદ્ધિના મૂળ જેવા, બધી લલનાઓનાં મનને આકર્ષિત કરનારા મંત્રનું જ્ઞાન ધરાવનારા ગાડુડીના પૃથ્વીને શોભા આપનારા મણિ જેવા, જાણે કે મજનું પરમ બાગ્ય હોય તેવા, શરીર ધારણ કરી ત્રણે લોકના અજ્ઞેડ સૌંદર્યરૂપ, ત્રણે લોકનાં નયનોમાંથી જન્મેલી સફળતા જેવા, પ્રતિબિંબ-રૂપ થઈ રહ્યાં હોય તેવાં અનેક પ્રકારની નિકુંજોનાં ફૂલોથી જાણે કે જેમને બધા દેવો સંમાન આપી રહ્યા છે તેવા, બધાં જ પુષ્પોના ઢગલા જેવા (પ્રભુ)નાં મેં દર્શન કર્યાં. તેથી કરીને પ્રેમથી સભર અનેલા મનની સાથે ઈંદ્રિયોરૂપી અમૃતસાગરવરૂપ (પ્રભુ)નાં પ્રત્યેક તરંગમાં લાંબા સમય સુખી મારાં નેત્રરૂપી મત્સ્ય દુબકી મારી રહ્યાં. એ સમયે એમને પામવાની હું આશા કરી સ્ત્રી હતી તેથી મારી નિદ્રા જિડી ગઈ, તેથી કાણે કાણે ખૂબ ખૂબ વધી ગયેલા શેમાંચને લીધી હું આ પ્રમાણે વલાપ કરવા લાગી : 'હે સ્વામી, હે શરણે આવનારનો સ્વીકાર કરનારા, અરે હો ગોપીજનોના આધાર, હે વૃંદાવનની ભૂમિના અલંકાર, આનંદીઓનો હે આનંદ વધારનારા, (૯)

વંચનમરચયદિયતા કાન્દ્ર વિધિસ્તદાસ્ચંદોઃ ।
 અવલોકેડલિલ્લેજકાંસુષમાસ્યદપાદપદ્મશ ॥૧૦॥

સમગ્ર લોકના અજ્ઞેડ સૌંદર્યના સ્થાનરૂપ હે ચરણકમલવાળા (પ્રભુ), આપના મુખ-ચંદ્રનું દર્શન કરવાના વિષયમાં વિધિએ આટલો સમય છેતરપીંડી કરી. (૧૦)

અહહ પ્રિયસંગેન વિના કથમહં ક્ષણં જીવિષ્યે ।
 વલ્લ્લીડુંદવલ્લમસ્ય વિયોગતઃ ॥૧૧॥

બધાં ગોપીજનોના વહાલાના વિયોગથી, પ્રિયનો સમાગમ થયા વિના કાણુમાત્ર પણ હું જીવન કેવી રીતે ધારણ કરી શકું ? (૧૧)

પ્રથમં ભવતોડદર્શનોદ્દેગેનાપિ દુઃલસંતાનમ્ ।
 અચુતા મંવેતો ટર્મિ દુઃક્લં પ્રાપ્તં ત્વદપ્રાપ્તયા ॥૧૨॥

પ્રથમ આપનું દર્શન ન થવાને કારણે થયેલા ઉદ્દેગને લઈ હું ખો પર હું ખો આવી લાગ્યાં; અત્યારે આપનાં દર્શન તો થયાં, પણ આપની પ્રાપ્તિ મને ન થઈ તેથી હું ખો આવી પડ્યું. (૧૨)

મવલીનિ ક્ષિમિત્યયં પ્રસંગોમ્વદિત્યં પ્રિય મે મનોરથેડપિ ।
 ન હિ સંભવતિ ભ્રમાદપીઞ્ઞ વ્રજગોપીજનજીવનપ્રિયશ ॥૧૩॥

હે પ્રિય, થઈ રહ્યો છે એમ મારો મનોરથ હતો છતાં પણ આ પ્રસંગ કેમ બનવા પામ્યો ? વ્રજનાં ગોપીજનોને જીવન આપનારાં ચરણકમલ ધરાવનારા હે સ્વામી, પ્રમથી પણ આવું સંભવે નહિ. (૧૩)

सर्वं मधुरिमासीम तावकं गोकुलेश्वर ।

यदि त्वद्विरहो न स्यादक्षमः स्वाश्रयेक्षणं ॥१४॥

अधुं माधुर्यनी इह कथां पूरी थाय छे तेवुं छे. हे जोकुलना स्वामी, जे आपने
विरह न थाय तो पोलाना आश्रितोने दर्शन न करावी शके. (१४)

एवमुक्त्वाश्वस्तं विलपंतीमूर्च्छिताऽमासम् ।

ततश्चिरेण भुतिपयगतप्रियवंशीनिनादैर्मैत्रिवि विगतमूर्च्छाहममक्षम् ।

ततो मामिदं दुःखितां सखी तत्रापश्यत् ।

- ततो मरुःखनुःखिता तामहं प्रोवाच स कोऽपि सखिसानंदनंदाद्युत्संगव्यलितः ।

करोति सुपमासीमां मन्मथान्मथितो हि मः ॥१५॥

जेम अनेक प्रकारे मोटा थ्यास भरती विलाप करती करती हुं भूछां पाभी गर्ध.
त्यार पछी लांणा सभये प्रियनी अंसीने नाह सांभणवाभां आवतां मत्रोधी भूछां नाश पाये
ते रीते मारी भूछां नाश पाभी. जे सभये दुःखी थयेली मने आ सपीजे जेध, जेटले भूछ
दुःखी थयेली हुं जेने कहेवा लागी : 'कामहेये जेमने जेदी नापेल छे अने आनंदी नंदराय
वजेरेना जोणाभां लाड पायेला छे तेवा जे अनेउ सो'दर्यानी इह वाणी रह्या छे. (१५)

तं न पश्यामि कः श्याममुंदरं दशयिस्तपि ।

मुस्लीकलनादेन मोहयंतमदोज्ञान् ॥१६॥

अली सपी, मुस्लीना भीडा नाहथी आ जगतने मोह पमाडता जे श्याममुंदरनां
मने दर्शन करावनासे मारी नजरभां कोछ आवते. नथी. (१६)

कापि सखी मम संप्राप्त वरिवर्ति किमु व्रजाधिपप्राणा ।

या नंदमृतमुस्लीतरलं चेतः समादप्यन्त ॥१७॥

नंदरायना पुत्रनी मुस्लीजे इलापी नापेला चित्तनुं समाधान करे तेवी व्रजना
स्वामी श्रीकृष्णने प्राणरूप जलनारी मारी कोछ सपी छे जरी ? (१७)

गताऽऽस्मयाहमये कलिंदकन्यातटं तत्र तमात्नीलम् ।

त्रिभंगमस्मत्कुलधर्मधैर्यमंगं चतुष्पादधनं त्वपद्यम् ॥१८॥

अरे, आले हुं कलिंदीना तट पर गर्ध ज्यां तमालपुक्षना जेवा श्याम, शरीरने
त्रिभंग करी जेलेला, अमारा कुवधर्मनी धीरजने लागी नापनारा पशुपति (जोपाल)नां मे
दर्शन कर्या. (१८)

किं कुर्मः क्व वामः क्व तिष्ठामः किमेतदासीलः ।

इति चितासंताना बुद्धेः पारंगता गोप्यः ॥१९॥

'अमे शुं करिये ? कथां जेधिये ? कथां जेपी रहिये ? अमने आ शुं थयुं ?' जेम
सतत चिता करनारी जोपीजे बुद्धिनी पेले पार आली गर्ध (जेमान थर्ध पडी). (१९)

॥ इति श्री विद्वत्श्रग्विरचितं स्वप्नदर्शनं समाप्तम् ॥



હારીખેલમાં હરિરિહ વ્રજયુવર્તિઘાતસંગે' આદિ પદ-રચનાઓ ઉપલબ્ધ થાય છે. તેમ જ રાજભોગ, સંઘ્યા અને શયનસમયે આરતીની પણ સુંદર આર્યાઈ'દમાં રચના છે, તે શ્રી ગોસ્વામી ખાલકોએ કંઠસ્થ કરી, તે તે આરતી વખતે યોદ્ધીને આરતી એવી સેવાપ્રણાલી છે.

મંગલા-આરતીની આર્યા

મંગલા આરતીની આર્યામાં ગાગરમાં વરુની જેમ નંદાલયમાં પ્રાકટચના સમયથી મધુર રાસલીલા પર્યાંતની સર્વ લીલાઓનું નંદરવામાં આવેલ છે.

મંગલમંગલં વ્રજમુવિમંગલમ્ ।

વ્રજભૂમિમાં પ્રભુના પ્રાકટચથી સર્વંત્ર નગર, મે, ગોશાલા, આક્રાઈ સ્થાનોમાં આનંદ વેરી ગયો, એના હર્ષોલ્લાસસૂચક ત્રણ વખત મંગલ શબ્દનું ઉચ્ચારણ કરવામાં આવ્યું છે.

મંગલમિદ્ શ્રી નન્દગદોદાનામનુકીર્તનમેતદ્વિરાસંગ-લિલપાલિતરુપમ્ ॥૧॥

આ વ્રજમાં શ્રીનંદનંદન-શ્રીયશોદાનંદન-કૃષ્ણનું નામકીર્તન મંગલરૂપ છે. યશોદાલની કમ્ભાં જેમનું વાત્સલ્યપૂર્વક લાલનપાલન થઈ ગયેલ છે, તે યશોદોત્સંગલાલિતરૂપ મંગલરૂપ છે. (૧)

આમાં પ્રાકટચ અને નંદમહોત્સવના ભાવનું નિરૂપણ છે.

શ્રીશ્રીકૃષ્ણ ઇતિ શ્રુતિસારં નામ સ્વાતર્જનાશય-નગપહમિતિ મંગલરાવમ્ ।

સકલ શોભાયુક્ત 'શ્રીકૃષ્ણ' નામં સર્વં વેદના આરૂપ છે. આ નામ નિજભક્તજનોના વિરહ-રૂપનું શમન કરનારું મંગલ શબ્દરૂપ છે.

આમાં ગર્જાચાર્ય દ્વારા અંતઃકરણને શુદ્ધ કરનાર નામકરણ લીલાનો ભાવ વર્ણવેલ છે.

વ્રજસુન્દરોવચસ્વમુરમીશૃંદમૃગીગણનિસ્પમખવા(વં) મંગલતિધુચ્યા(વમ્) ॥૨॥

વ્રજગોપીઓ, ગોપખાલકો, ગાયો, પશુ-પક્ષીઓના અનુપમ ભાવસ્વરૂપ આનંદસાગરના સમૂહસ્વરૂપ પ્રભુ શ્રીકૃષ્ણ સર્વંદ મંગલરૂપ છે.

(૨) આમાં નંદાંગણમાં રિંગણલીલા આદિ ભાવો નિહિત છે.

મંગલમીપત્સ્મિતયુતવીક્ષમમાપજમુજ્જતનાસાપુટાગતમુકા-ફલચ્છનમ્ ।

મંદ હાસ્યસહિત અવલોકન (કટાક્ષપાત) મંગલરૂપ છે. ભાષણાદિ સમયે સુંદર નાસિકમાં ધરાયેલ નકષેસર-ખુલાખના ગજમોતીનું ચલન મંગલરૂપ છે.

આમાં ગોપીજનો સાથે પરસ્પર સંભાષણ, માખણચોરી આદિ લીલાઓનું ભાવનિરૂદરૂપે વર્ણન છે.

કેમલચ્છલદંગુલિદલસંગતવેણુનિનાદવિમોહિતત્ત્વંદાવન-મુવિજાતા(તમ્) ॥૩॥

સુકોમલ ચંચલ અંગુલિઓની સાથે અધર ઉપર ધરેલી ખંસીના શબ્દની સ્વરલહરીથી વિમોહિત કરી સ્વલીલામાં પ્રવેશાધિકાર આપ્યો છે. વૃંદાવનની ભૂમિમાં સ્થિત વૃક્ષ, લતા, ગાય, ગોપી, જડ-ચૈતન સર્વને તે સર્વંદ મંગલરૂપ છે. (૩)

આમાં વેણુગીતના ભાવનું સ્પષ્ટ વર્ણન છે.

મંગલમસ્થિલં ગોપીધિનુરતિમંથરગતિવિભ્રમમોહિત-રાસસ્થિતગાનમ્ ।

ગોપીજનવલ્લભની સમસ્ત લીલા, હાવ, ભાવ, ગતિ, નિરીક્ષણ, રાસગાન સર્વ મંગલરૂપ છે.

આ તુકમાં રાસલીલાનું વર્ણન છે.

સ્વં જય સતતં ગોવર્ધનપર પાલવ નિજદાસાન્ ॥૪॥

હે ગોવર્ધનધર ! આપની સદા જ્ય હો. આપ કૃપા કરી નિજભક્તજનોનું પાલન કરો. (૪)

આ તુકમાં દેવેર્ષ્યતિ યજ્ઞવલ્લવળ્યા-પ્રીયાજ્ઞદ્વે
ગવામ્ આ ગોવર્ધનલીલાનું વર્ણન છે.

આ મંગલા આરતીની આર્યામાં આવી રીતે
રાસલીલાપર્યંતની ફલરૂપ લીલાઓના દિવ્ય
ભાવાનું નિરૂપણ છે. તે હૃદયંગમ કરતાં
મંગલા આરતી કરવાની પ્રણાલી છે.

૨. રાજભોગ-આરતીની આર્યા

બ્રજરાજવિરાજિતવૌષવરે, વરણીયમનોહરરૂપવરે ।
ધરણીરમણીરમણૈકવરે, પરમાર્તિહરસ્મિતવિભ્રમકે ॥૨॥

મકરાકૃતકુણ્ડલોભિમુલ્લે, મુલ્લરીકૃતવૃપુરહચગતૌ ।
ગતિસંગતભૂતલતાપહરે, હરશક્તિવિમોહનગાનવરે ॥૨॥

પરમપ્રિયગોપવધૂદરયે, દગ્યા દિનતાપહરે મુદ્દદામ્ ।
હૃદયસ્થિતગોકુલસ્વાસિકને, જનહૃદયવિહારવરે સતતમ્ ॥૩॥

તતલેખનિનાદવિનોદવરે, પરચિત્તહરસ્મિતમાત્રકયે ।
કથનીયગુણાકરપાદ યુગે, યુગલે યુગલે મુદ્દશાં મુરતૌ ॥૪॥

રાજભોગ આરતી કરતાં શ્રીમત્પ્રભુચરણ
વિકૃલનાથજી 'મારો પ્રેમ પ્રજ્જરાજ સુત-શ્રીનંદ-
કુમાર વિષે થાયો' એવી અભિલાષા કરે છે.
બ્રજરાજસુતે આ પદ સપ્તમ્યન્ત પદો વિશેષ્ય છે.
ખીબ્બં બધાં સપ્તમ્યન્ત પદો પ્રજ્જરાજસુતનાં
વિશેષણો છે.

ગાયોનાં ધણ રાખીને અહીર (આયરો) જે
સ્થાન (નેસડા)માં રહેતા હોય તેને 'ધોષ' કહેવામાં આવે છે. ગોકુલ ગામમાં બિરાજી રહેલા શ્રીપ્રજ્જરાજ, ભક્ત વિકૃલથી વર્ણવાય તેવું મનને હરણ કરનાર સુંદર સ્વરૂપ, મકરાકૃત કુંડલથી સુશોભિત મુખ જેમનું છે એવા, ચરણારવિંદમાં શબ્દ કરી રહેલા નૃપુરની સુંદર ગતિવાળા, ગતિ-સંગતિથી ભૂમિનો તાપ હરનાર, સંગીતજ્ઞ શિવ-ઇન્દ્રાદિ દેવોને વિમોહિત કરનાર; વેણુગાનમાં તત્પર, અતિપ્રિય ગોપસ્ત્રીઓના હૃદયમાં બિરાજમાન અથવા ગોપીજનો જેમના હૃદયમાં બિરાજે છે એવા, કૃપા કરીને ભક્તજનોના દિવસના તાપને હરનાર, ગોકુલ-નિવાસી પ્રજ્જવાસીઓના હૃદયમાં બિરાજનાર,

નિરંતર ભક્તજનોના હૃદયાહુતઃકંક વિહાર કરવામાં તત્પર, વેણુવાદનરૂપી ખેલમાં તત્પર, મંદહાસ્યયુક્ત મનોહર વચનોથી ખીબના ચિત્તને હરનાર, વર્ણનીય સકલ ગુણનિધાન યુગલ ચરણે, સુનયના પ્રજ્જસીમંતિનીઓ સાથે રમણ કરતા યુગલ સ્વરૂપે વિરાજમાન એવા પ્રજ્જરાજસુત-નંદકુમાર-શ્રીકૃષ્ણમાં મારી (શ્રી-વિકૃલનાથજી)ની રતિ થાયો.

૩. સંધ્યા આરતીની આર્યા

આ આર્યા પંચમસુત શ્રીરઘુનાથજી કૃત હોવાની પ્રતીતિ થાય છે. આમાં રતિસ્તુ સદા વલ્લમનનયે-સર્વદા વલ્લભસુતમાં (શ્રીવિકૃલેશ-પ્રભુચરણ શ્રીગુમાંઈજીમાં) મારી રતિ (મારો પ્રેમ) થાયો.' આ પ્રવચનમાં શ્રીગુમાંઈજીને અને શ્રીપ્રભુને તદ્રૂપ ભાવથી વર્ણન કરીને પંચમકુમાર શ્રીરઘુનાથજીએ આ આર્યા બનાવી છે. જેમ શ્રીગોપાલદાસજીએ નવાખ્યાતમાં વર્ણન કરેલ છે; છીતસ્વામી તથા અનન્ય ભગવદીયોએ 'વિકૃલેશ ચરણકમલ, પાવન ગૌલોક્ષ્યકરણ્ય' જે વસુદેવ ક્રિયે પૂરન તપ, સો ફલ ફલિત શ્રીવલ્લભદેવ' 'આગે' આય પાછે' ગાયમાં 'છીતસ્વામી ગિરિધારી, વિકૃલેશ વપુ ધારી' આદિ અનેક પદોમાં વર્ણન કરેલ છે, તેમ 'વલ્લભતનય' આ શબ્દ સ્પષ્ટ હોવાથી આ આર્યા શ્રી રઘુનાથજી નિર્મિત હોવાનું પ્રાચીન આચાર્યબાલકો અને વિદ્વાનો માને છે.

રતિસ્તુ સદા વલ્લમનનયે ।
હરિમંતિમુષોદાદિચિદ્વિકરે કરંવર્જિતકૃપ્યકધામરસે ।
રસિકાગમવાગમૃતોક્તિવરે પરમાદરણીયતમાબ્જવરે ॥૨॥
પદબંધિતવાચનવાપચને અનનીજટરાગમતાપહરે ।
હરનીતવિદારણામકથે કથનીયગુણાકરદાસવરે ॥૨॥
ચરણાજમાનહરાગમને રમણીયમહોદધિરાસરસે ।
રસપટ્ટદગંચલશોભિમુલ્લે મુલ્લરીકૃતલેખનિનાદરસે ॥૩॥
રતિનાથવિમોહનવેષવરે ધરણીધરધારણમારમરે ।
મરતાગમશિક્ષિતલાસ્યકરે કરકૃષ્ણગીરીરૂપદાન્જરતે ॥૪॥
રતિસ્તુ સદા વલ્લમનનયે ॥

પ્રભુભક્તિરૂપી અમૃતસિંધુની વૃદ્ધિ કરનાર, રસમય કૃષ્ણકથા વર્ણન કરનાર, આગમયુક્ત વચનામૃતમાં તત્પર, ભક્તો દ્વારા અત્યંત આદરણીય ચરણકમલ જેમનાં છે (એવા), (૧)

પદવંદનમાત્રથી પાપીઓને પવિત્ર કરનાર, જન્મ-મરણનો તાપ હરનાર, પાપાંડને નષ્ટ કરનાર જેમની નામકથા છે, વર્ણનીય ગુણોની ખાણ ઉત્તમ ભગવદીય જેમના છે (એવા), (૨)

મઠ-માનને હરણ કરનાર જેમનું આગમન છે, સુંદર રાસરમસાગર સ્વરૂપ, રમણરેલાં નેત્રોથી સુશોભિત મુખવાળા, કૃષ્ણિત વેળુનાંદમાં તત્પર (એવા), (૩)

કામદેવને મોહક વેષ ધરનાર, ગોવર્ધન-ધારણુભારથી યુક્ત, ભરતનાટ્ય - લાસ્યનૃત્ય કરવાવાળા, ગિરિધારી શ્રીકૃષ્ણના ચરણકમલમાં રત એવા શ્રી વલ્લભતનય (શ્રી ગુસાંઈજી)માં મારો સર્વદા પ્રેમ થાઓ. (૪)

૪. શયન-આરતીની આર્યા

ગોપાધિપતિ કમલાધિપતિ વન્દે તમહં મધુરાધીશમ્ ।
 શરણાગતમીતિ નિઃકેશરં પરબ્રહ્મનમોનિકરાંમુનિધિમ્ ।
 નિધિસેવિતપાદસરોજયુગં યુગધર્મનેર્ભરિતકાલકરમ્ ॥૧॥
 કરજોશ્ણિસ્થિતં પ્રમદૌષકુચં કુચકુકુમલિન્તયશોહદયમ્ ।
 હૃદયસ્થિતગોકુલવાસજનં જનસંચેતપુષ્પચયૈકફલમ્ ॥૨॥
 ફલદાનપરાતિભયમ્ભુજં મુજદળ્લગ્નીતકુચામ્રમણિમ્ ।
 મણિદોમિતહસ્તપથાદિવરં વરગોપવપૂચયસંવલિતમ્ ॥૩॥
 વલિતપ્રમદાયુતરાસકરમ્ કરપણયુગાહિતથેણુવરમ્ ।
 વરમ્ભકશિરસ્થિતપદ્મકરં કરમર્દિતયાદવયૂધરિપુમ્ ॥૪॥
 રિપુયૂથમુજંગમદર્ગહરં હરપૂજિતરમ્પરોજવદમ્ ।
 પદપણયુગાચિતદક્ષરદં પદપદ્મનલસ્થિતમકિરતમ્ ॥૫॥
 રસપુરિતગોપવધૂશરણં શરણાગતયોગજનામયદમ્ ।
 મયદૌષશિરોહરલ્લગ્નપરં ધરણીકૃતપુષ્પચયૈકફલમ્ ॥૬॥
 ફલધેનુવિમર્દિતવુષ્ણલ્લભં લરમુક્તિપદાદસરોજવરમ્ ।
 વરવ્રાંદિશિર્ષાઢકપુકાઢચં કચવાશનિવેશિતપુષ્પચયમ્ ॥૭॥
 ગોપાધિપતિ કમલાધિપતિ વન્દે તમહં મધુરાધીશમ્ ॥

મંગલા આરતીની આર્યામાં 'હે ગોવર્ધનધર! સર્વમંગલરૂપ! આપનો, જય હો! નિજ દાસો-ની રક્ષા કરો.'-એમ જયઘોષપૂર્વક વિનંતી છે.

રાજસોગ અને સંઘ્યા આરતીની આર્યામાં સ્મૃતચિન્ત પદોથી ભગવદ્વિષયિણી રતિની યાચના કરેલ છે.

આ શયન આરતીની આર્યામાં નિરપેક્ષ પ્રભુના વિષે જીવ દીનભાવથી નમન કરવા સિવાય કાંઈ કરવા સમર્થ નથી. પ્રભુ નિરપેક્ષ હોવા છતાં સદેહ્ય નતિ-વિનંતીથી ભક્તવત્સલ પ્રભુ ભક્તસાપેક્ષ થઈ એની સેવા અંગીકાર કરે છે. એ સિદ્ધાંતદહ કરવા માટે શ્રીગુસાંઈજી કહે તમહં મધુરાધીશમ્ આર્યામાં વર્ણિત દ્વિતીયાન્તપદ વિશેષણોથી વિભૂષિત મધુરાધીશને 'હું' નમન કરું છું' - એમ વર્ણન કરે છે.

આપ શરણાગતના ભવનવારણમાં તત્પર છે. આસુરભાવરૂપી અજ્ઞાનાંધકારને નષ્ટ કરવામાં અંદ્ર સ્વરૂપ છો, જેમનાં યુગલ ચરણ નિધિરૂપથી સેવવામાં આવે છે, અથવા અદ્ભુતસિદ્ધિ નવનિધિથી સેવિત જેમનાં ચરણકમલ છે, કલિયુગના ધર્મને નિવૃત્ત કરનાર, (૧)

સ્વનખથી મજસીમંતિનીઓના કુચને ચિહ્નિત કરનાર, કુચકુંડુમમંડિત યશસ્વી હૃદયવાળા, ગોકુલવાસી જેમના હૃદયમાં વસેલા છે. ભક્તજનોના ભેગા થયેલા પુણ્યસમૂહના ફલસ્વરૂપ, (૨)

ફલદાન આપવામાં સમર્થ ભુભવાળા, મણિરૂપ કુચચૂચુકને સશક્ત ભુભથી ગૃહણ કરવાવાળા, મણિશોભિત હસ્તથી શ્રીગિરિશજને ધારણ કરનાર, ગોપીજનોના સમૂહથી યુક્ત, (૩)

અતિ સૌભાગ્યમદયુક્ત મજભક્તો સાથે રાસ કરનાર, અને કરકમલમાં વેણુ ધારણ કરવાવાળા, શ્રેષ્ઠ ભક્તોના મસ્તક ઉપર હસ્તકમલ સ્થાપિત કરનાર, ચાહવધૂના શત્રુઓને હસ્તથી મર્દન કરનાર, (૪)

શત્રુઓના યુથરૂપી સર્પોના દર્પને નાશ કરનાર, જેમના સુંદર ચરણ શિવજીથી પૂજિત છે, ચરણાર્ચન કરનારને પદ આપનાર, જેમના ચરણ નખમાં ભક્તિરસ સ્હેલ છે, (૫)

રસભાવભરિત ગોપીઓના રક્ક, શરણ આપેલા મજવાસીઓને અભયદાતા, ભય આપનારના શિરચ્છેદન માટે ખડ્ગધારી, ધરણીભાગ્યના પુણ્યફલરૂપ, (૬)

પુષ્ટિક્ષ્ણ આપવા માટે તદ્દિરૂદ્ધ દુષ્ટોને વિમર્દવ કરનાર, ધનુકામુરને મુક્તિ દેનાર જેમનાં ચરણકમલ છે, મસ્તક ઉપર ધારણ કરેલા સુંદર મોરમુકુટથી જેમના કથ સુશોભિત છે, કેશસમૂહમાં કૂલના ગુચ્છઓ ધારણ કરેલ છે, એવા મળાધર્પાત, કમલાધર્પાત પ્રભુ શ્રીમધુસૂદીશને હું (શ્રી વિઠ્ઠલનાથજી) નમન કરું છું.
(૭)

卐

શ્રીકૃષ્ણ: ।

ગોવર્ધનપર્વતની આસપાસ પરિભ્રમણ કરતાં ગોવિંદકુંડ ઉપર એમને શ્રીનાથજીની ગાંધી મર્ધા શ્રીનાથજીની આગાથી શ્રીગુણાંજલિએ એમને શરણે લઈ સેવક કર્યા. પછી તે એઓ વ્રજમાં ત્રિચર્યા કરતા અને યુગલસ્વરૂપ સંબંધી કાવ્યરચના કરી, એનું ગાન અને ધ્યાન કરતા.

શ્રીગોકુલમાં મોરવાલા મંદિરના બગીચામાં (રમણરેતીમાં) રસખાનજીની સ્મૃતિરૂપ છતરી આવેલી છે.

એમણે 'સુગ્ગન રસખાન' 'પ્રેમવાટિકા' અને 'સ્કુટ પદો'ની સુમધુર રચના કરેલી છે. 'પ્રેમવાટિકા'ની રચના એમણે સં. ૧૬૭૧માં કરેલી છે, તે એમના 'વિદ્યુ(૧) રસ(ક) સાગર(૭) ઇંદુ(૧) મુખ' એ દોહા ઉપરથી જાણી શકાય છે.

એમનાં બે પ્રાચીન ચિત્રો ઉપલબ્ધ થાય છે : (૧) ભારત કલાભવન-કારણીમાં સંગૃહીત 'કવીશ્વર રસખાનજી'નું ચિત્ર છે. આ ચિત્રમાં મથાળે નાગરી લિપિમાં 'કવૈશ્વર રસખાન' અને તેની નીચે ઉર્દૂ લિપિમાં 'અમલ મુસવ્વર સિવદાસ તસવીર મિયાં રસખાન કવીશ્વર ચાની શાયર દિદી' - એમ બે વાર લખેલું છે. (૨) સાંપ્રદાયિક પુસ્તક પ્રકાશક ગો. વા. શ્રી. લક્ષ્મણાઈ જનલાલ દેસાઈએ શ્રીરસખાનજી વિષે પ્રકટ કરેલ પુસ્તકમાં શ્રીનાથજી સાથે શ્રીરસખાનજીનો ભાવદશાનો ફોટો ખેલોક જાણ્યો છે, તે પણ સુંદર છે.

અહીં 'વૈશ્વાનર' માસિકના નૂતન સંસ્કરણના 'પ્રવેશાંક'માં શ્રીરસખાનજીની સરસ કાવ્યકૃતિ 'પ્રેમવાટિકા'નો મૂળ સાથે ગુજરાતીમાં ભાવાર્થ પ્રકાશિત કરતાં અત્યંત આનંદ થાય છે. મૂળ વાચના માટે હિંદી પુસ્તક પ્રકાશકોનો હાર્દિક આભાર માનું છું.

જવેરી બગ્ગર,
પારખંદર, તા. ૨૪-૬-'૭૮

- પ્રેમલાલ ગો. શ્રેવચા 'લક્ષ્મિપ્રિય'

મહાનુભાવ શ્રીરસખાનજી કૃત

પ્રેમવાટિકા

(મંગલાચરણ)

મોહન છબિ 'રસખાનિ' લખિ, અબ દગ અપને નાહિં
એચે આવત ધનુષ સે, છૂટે સર સે નાહિં. ૧

ભગવાન શ્રીકૃષ્ણચંદ્રની મનમોહક છબિનાં દર્શન થતાં, જેમ જેએલા ધનુષમાંથી છૂટેલું બાણ ખાધું આવતું નથી, તેમ હવે આ નેત્રો મારાં રહ્યાં નથી - ભગવાન શ્રીકૃષ્ણના સ્વરૂપમાં તલ્લીન બની ગયાં છે. (૧)

બંક બિલોકનિ હુંસનિ મુરિ, મધુર જૈન રસ સાનિ,
મિલે રસિક રસરાજ દોઉ, હરખિ હિયે 'રસખાનિ.' ૨

સુંદર હાસ્યામૃત ભરેલી વાંકી દષ્ટિથી અવલોકન કરતા અને રસભરેલ મધુર વચનામૃત વરસાવતા રસરાજ શ્રીકૃષ્ણ, મને રસિકને મળવાથી મારું હૃદય હર્ષાયમાન થઈ રહ્યું છે. (૨)

દેખ્યો રૂપ અપાર, મોહન સુદરશ્યામ કે,
વહ પ્રજ્વલજ્વકુમાર, હિય જિય નૈનનિ મેં બસ્યો. ૩

શ્યામસુદરના મનમોહન અને અપાર રૂપનું દર્શન થતાં, એ પ્રજ્વલજ્વકુમારનો મારા હૃદયમાં, પ્રાણમાં અને નેત્રોમાં નિવાસ થયો. (૩)

યા છબિ પૈ 'રસખાનિ' અખ, વારો' કોટિ મનોજ,
બકી ઉપમા કવિન નહિ, પાઈ, રહે સુ જોજ. ૪

જેની સુદરતાની ઉપમા માટે સારી પેઠે શોધ કરવા છતાં પણ કવિઓને ચોખ્ખ સખ્તો મળતા નથી; એવા પ્રજ્વલજ્વકુમારની આ છબિ ઉપર કરોડો કામદેવને નોજાવર કરી નાખું. (૪)

સદા ફૂલી ફૂલી ઓર હરીભરી

પ્રેમવાટિકા

(દોહા)

પ્રેમ-અચનિ શ્રી રાધિકા, પ્રેમ-બરન નંદનંદ,
'પ્રેમવાટિકા' કે દોહા, માલી-માલિન દંદ. ૧

શ્રીરાધિકાજી પ્રેમના ધામરૂપ છે અને શ્રીનંદરાજકુમાર-શ્રીકૃષ્ણચંદ્ર પ્રેમતાલુકા-શ્યામવલ્લુ અને પ્રેમનું વરણ કરનાર છે. એ બંને 'પ્રેમવાટિકા'ને હરીભરી રાખનાર માલી-માલણનું યુગલ છે. (૧)

પ્રેમ-પ્રેમ સળ કોઉ કહત, પ્રેમ ન બનત કોય,
જો જન બને પ્રેમ તો, મરે જગત ક્યો' રાય ? ૨

પ્રેમ-પ્રેમ તો બધાંય કહે છે; પરંતુ વાસ્તવિક રીતે પ્રેમને કોઈ બાણનું જ નથી. જે મનુષ્ય પ્રેમને બાણતા હોય તો આખું જગત કેમ રડી મરે છે ? (૨)

પ્રેમ અગમ અનુપમ અમિત, સાગર-સરિસ બખાન,
જો આવત એહિ દિગ, બહુરિ, બલ નહિ 'રસખાન.' ૩

સાગરની જેમ સરસ પ્રશસિત થયેલ પ્રેમ અગમ હોવાથી બાણી શકાતો નથી; અનુપમ હોવાથી તેને કોઈની ઉપમા આપી શકાતી નથી; અને અમિત-અમયાંદ હોવાથી માપી શકાતો નથી. પરંતુ એમાં એટલો ચમત્કાર છે કે, જે કોઈ એની પાસે આવે છે, તે ફરી વાર પાણું જનું નથી! (૩)

પ્રેમ-બાડુનિ છાનિકૈ, બડુન ભયે જલધીસ,
પ્રેમહિં તે' વિષ પાન કરિ, પૂજે બલ ગિરીસ. ૪

પ્રેમ-મદિરા બાણીને જ વરુણ, જલના અધિષ્ઠાતા-જલદેવતા થયા. તેમજ પ્રેમવડે વિષ-પાન કરવાથી જ ગિરીશ-શંકર પૂજ્ય છે. (૪)

પ્રેમ રૂપ દર્પન અહો, રચૈ અજુઓ ખેલ,
યા મેં અપનો રૂપ કહુ, લખિ પરિ હૈ અનમેલ. ૫

અહો ! પ્રેમ રૂપી દર્પણ કાંઈ વિચિત્ર જ ખેલ રચે છે કે, જેમાં પોતાનું રૂપ કાંઈ મેળ વિનાનું દેખાય છે ! (૫)

કમલ તંતુ સોં છીન અડુ, કદિન બડગ કી ધાર,
અતિ સૂધો ટેકો બહુરિ, પ્રેમ-પંથ અનિવાર. ૬

કમળતંતુ કરતાં પણ કેમળ અને ખડગની ધાર કરતાં પણ કઠણ-તેજ એવો પ્રેમ-પંથ અતિ સીધો હોવા છતાં ધણો જ વાકો અને અનિવાર્ય છે. (૧)

લોક-વેદ-મરબાદ સળ, લાજ કાજ સદેહ,
દેત બહાયે પ્રેમ કરિ, વિધિ-નિવેધ કો નેહ ? ૭

લોક-વેદની મર્યાદા, લાજ, કાજ અને સદેહ-એ બધું પ્રેમ માટે વહેતું મૂકી દેવાય છે. સ્નેહમાં વિધિ શું અને નિવેધ શું ? (૭)

કુળહું ન જા પથ ભ્રમ-તિમિર, રહે સદા સુખચંદ,
દિન દિન બાદત હી રહે, હોત કુળહું નહિં મંદ. ૮

જે પ્રેમ-પંથમાં કપારેય અજ્ઞાન રૂપી અંધકાર હોતો નથી; પરંતુ સોળે કળાનો સુખરૂપી મંદ્ર જ્યાં સદા પ્રકાશી રહે છે. દિવસે દિવસે તેમાં વધારો થતો રહે છે, પણ કપારેય ધીમે પડતો નથી. (૮)

ભલે વૃથા કરિ પચિ મરે, જ્ઞાન-ગરૂર બદાય,
બિના પ્રેમ કીકો સગે, કોટિન કિયે ઉપાય. ૯

મિથ્યા જ્ઞાન વડે અભિમાન વધારી ભલેને દારી જાવ ! પરંતુ કરોડો ઉપાય કરવા છતાં પ્રેમ વિના બધું નીરસ છે. (૯)

શ્રુતિ પુરાન આગમ સ્મૃતિહિ, પ્રેમ સળહિં કો સાર,
પ્રેમ બિના નહિં ઉપજ હિય, પ્રેમ-બીજ અંકુવાર. ૧૦

શ્રુતિ, પુરાણ, શાસ્ત્ર, સ્મૃતિ વગેરે બધાનો સાર એક માત્ર પ્રેમ જ છે. હૃદયમાં પ્રેમરૂપી બીજ વાગ્યા વિના, પ્રેમનો અંકુર ઉત્પન્ન થતો નથી ! (૧૦)

આનંદ-અનુભવ હોત નહિં, બિના પ્રેમ જગ જન,
કે વહ વિપયાનંદ, કે, પ્રહ્લાનંદ જખાન. ૧૧

એટલું બાણબે કે, પ્રેમ વિના જગતમાં આનંદનો અનુભવ થતો જ નથી ! પછી ભલેને તે વિપયાનંદ હોય કે પ્રશંસિત પ્રહ્લાનંદ હોય ! એટલે કે, પ્રેમનો આનંદ સર્વોપરિ છે. (૧૧)

જ્ઞાન, કર્મરૂ ઉપાસના, સળ અહમિતિ કો મૂલ,
દંડ નિશ્ચય નહિં હોત, બિન, કિયે પ્રેમ અનુકૂલ. ૧૨

જ્ઞાન, કર્મ અને ઉપાસના—એ બધાં અહંકારનાં મૂળ છે. પ્રેમને અનુરૂપ કર્યા વિના દંડ નિશ્ચય થતો નથી. (૧૨)

શાસ્ત્રન પદિ પંડિત ભયે, કે મોલવી કુરાન,
જુષે પ્રેમ બા-યો નહીં, કહા કિયો 'રસખાન'. ૧૩

શાસ્ત્રો બણીને પંડિત થયા, અથવા; કુરાન બણીને મોલવી થયા; પરંતુ 'રસખાન' કહે છે કે, જ્યાંસુધી પ્રેમ બળ્યો નથી, ત્યાંસુધી એ બધું બળવાથી શું થયું ? અર્થાત્ પ્રેમને બળ્યા વિના બધું વ્યર્થ છે. (૧૩)

કામ, ક્રોધ, મદ, મોહ, ભય, લોભ, દ્રોહ, માત્સર્ય,
ઈન સળહી તેં પ્રેમ હૈ, પરે, કહત મુનિવર્ય. ૧૪

કામ, ક્રોધ, મદ, મોહ, ભય, લોભ, દ્રોહ અને માત્સર્ય—એ બધાંથી પ્રેમ દૂર છે, એમ મુનિવરો કહે છે. (૧૪)

બિન શુભ જોબન રૂપ ધન, બિન સ્વાસ્થ્ય હિત બાનિ,
શુદ્ધ, કામના તેં રહિત, પ્રેમ સકલ 'રસખાનિ.' ૧૫
રસખાનણ કહે છે કે, સાચા પ્રેમમાં ગુણ, યૌવન, રૂપ, ધન અથવા કોઈ પણ પ્રકારના સ્વાસ્થ્યની અપેક્ષા રહેતી નથી. એ તો સર્વથા શુદ્ધ અને કામનારહિત હોય છે. (૧૫)

અતિ સૂછમ કોમલ અતિહિ, અતિ નિયરો, અતિ દૂર,
પ્રેમ કઠિન સખ તેં સદા, નિત ઇકરસ ભરપૂર. ૧૬
પ્રેમ અત્યંત સૂક્ષ્મ, અત્યંત કોમળ તેમજ અત્યંત પાસે અને અતિશય દૂર છે. વળી પ્રેમ સર્વથી કઠણ છે અને નિરંતર એકરસથી પરિપૂર્ણ છે. (૧૬)

જગ મેં સખ બાન્યો પરે, અરુ સખ કહે કહાય,
પૈ જગદીસ'રુ પ્રેમ ચહ, દોહી અકથ લખાય. ૧૭
સંસારમાં સર્વ કાંઈ પ્રત્યક્ષ જોઈ શકાય છે અને સર્વની ચર્ચા થઈ શકે છે; પરંતુ પરમેશ્વર અને પ્રેમ—એ બંને અદૃશ્ય અને અકથનીય છે. (૧૭)

જેહિ બિનુ બાને કહુહિ નહિં, બાન્યો બાત બિસેસ,
સોઈ પ્રેમ, જેહિ બાનિ કે, રહિ ન બાત કહુ સેસ. ૧૮
જેને બાળ્યા વિના વિશેષ કાંઈ પણ બાણી શકાતું નથી, તે જ પ્રેમ છે. અને જેને બાણી લેવાથી સંસારમાં બાળ્યાને માટે બીજું કાંઈ પણ આકાંક્ષી રહેતું નથી. (૧૮)

દાંપતિ સુખ અરુ વિષય રસ, પૂજા, નિષ્ઠા, ધ્યાન,
ઇનતેં પરે બખાનિયે, શુદ્ધ પ્રેમ 'રસખાન.' ૧૯
રસખાનણ કહે છે કે, દાંપત્યસુખ (સતી-પુરુષાણું સુખ) અને અન્ય વિષયોથી થતો રસ, પૂજા, નિષ્ઠા અને ધ્યાન—એ બધાંથી પણ શુદ્ધ પ્રેમ દૂર છે. (૧૯)

મિત્ર, કલત્ર, સુખંધુ, સુત, ઇનમેં સહજ સનેહ,
શુદ્ધ પ્રેમ ઇનમેં નહીં, અકથા કથા સબિસેહ. ૨૦
મિત્ર, પત્ની, ભાઈ અને પુત્ર—એ બધાંમાં સહજ રનેહ હોય છે; પરંતુ તેમાં શુદ્ધ પ્રેમ હોતો નથી. એ શુદ્ધ પ્રેમની વાત તો સર્વથી અવર્ણનીય અને સર્વથી ઉત્તમ છે. (૨૦)

ઇક અંગી બિનુ કારનહિ, ઇકરસ સદા સમાન,
ગનૈ પ્રિયહિ સર્વસ્વ જો, સોઈ પ્રેમ પ્રમાન. ૨૧
પ્રેમ સદૈવ એકાંગી, અકારણ, એકરસ અને સદા સમાન રહે છે. એટલે કે, પ્રેમને કાળ બાધા કરી શકતો નથી. જે પોતાના પ્યારાને પોતાનું સર્વસ્વ ગણે છે, તે જ ખરો પ્રેમ છે. (૨૧)

ડરૈ સદા, ચાહૈ ન કહુ, સહૈ સઠૈ જો હોય,
રહૈ એક રસ ચાહિ કે, પ્રેમ બખાનો સોય. ૨૨
જે પોતાના પ્યારાથી નિત્ય ડરતા હોય અને એની પાસે કોઈ વસ્તુની ઇચ્છા કરે નહીં. જે વિશ્વિતિ આવે તે બધી સહન કરે અને સદૈવ પ્રેમ કર્યા પછી એકરસ (પ્રેમરૂપ) ચર્મિતે જ રહે, તે જ પ્રેમ પ્રશસનીય છે. (૨૨)

પ્રેમ પ્રેમ સળ કોઈ કહે, કઠિન પ્રેમ કી ફાંસ,
પ્રાન તરફ નિકરે નહીં, કેવલ ચલત ઉસાસ. ૨૩

પ્રેમ-પ્રેમ તો બધાંમ કહે છે; પરંતુ પ્રેમની ફાંસ-પ્રેમનું બંધન પણ જ કઠિન હોય છે.
પ્રેમીના પ્રાણ, પોતાના પ્યારના વિચારમાં તરફે છે; પરંતુ નીમળતા નથી. એ સમયે કેવળ
ઉચ્ચવાસ જ ચાલે છે. (૨૩)

પ્રેમ હરિ કો રૂપ હૈ, ત્યો હરિ પ્રેમ સરૂપ,
એક હોઈ દે, ત્યો લસે, બ્યો સુરજ અરુ ધૂપ. ૨૪

પ્રેમ, ઈશ્વરરૂપ છે અને ઈશ્વર, પ્રેમરૂપ છે. એ બંને - પ્રેમ અને શ્રીહરિ-એક હોવા ખતાં
સૂચી અને ધૂપ-તડકાની જેમ એ નામથી શોભી રલાં છે, (૨૪)

જ્ઞાન, ધ્યાન, વિદ્યા, મર્તી, મત, વિશ્વાસ, વિવેક,
ગિના પ્રેમ સળ ધૂર હૈ, અગ જગ એક અનેક. ૨૫

જ્ઞાન, ધ્યાન, વિદ્યા, શુદ્ધિ, મંતવ્ય, વિશ્વાસ અને વિવેક - એ બધાં પ્રેમ વિના ધૂળ જેવાં
છે. જેવી રીતે જગત એક છે અને તેમાં અનેક પર્વતોનો સમાવેશ થાય છે, તેવી જ રીતે એક
પ્રેમમાં બધાંનો સમાવેશ થઈ જાય છે. (૨૫)

પ્રેમ-ફાંસ મેં ફાંસિ મરૈ, સોઈ જિયે સદાઈ;

પ્રેમ-મરમ બાને ગિના, મરિ કોઈ જીવત નાઈ. ૨૬

જેઓ પ્રેમરૂપી ફાંસી-બંધનમાં પડીને મરી ગયા છે, તેઓ જ સદા જીવે છે. પ્રેમનો મર્મ
બાણ્યા વિના મરીને કોઈ પણ અમરતા પ્રાપ્ત કરતા નથી. (૨૬)

જગ મેં સળ તેં અધિક અતિ, મમતા તનહિં લખાય,

પૈ યા તનહૈ તેં અધિક, પ્યારો પ્રેમ કહાય. ૨૭

સંસારમાં સર્વથી વધારેમાં વધારે મોહ શરીરમાં જેવામાં આવે છે; પરંતુ પ્રેમ તો આ
શરીરથી પણ વિશેષ પ્યારો કહેવાય છે. (૨૭)

જેહિ પાયે વૈકુંઠ અરુ, હરિહૈ કી નહિં ચાહિ,

સોઈ અલૌકિક સુહ, મુલ, સરસ સુપ્રેમ કહાઈ. ૨૮

જેને પ્રાપ્ત કરી લીધા પછી વૈકુંઠની અને શ્રીહરિની પણ આદના રહેતી નથી; તે જ પ્રેમ
અલૌકિક, શુદ્ધ, કલ્યાણકારી અને સરસ કહેવાય છે, (૨૮)

કોઈ ચાહિ ફાંસી કહત, કોઈ કહત તરવાર,

નેબ, બાલા, તીર કોઈ, કહત અનોખી ઠાર. ૨૯

રસબાનજી કહે છે કે, પ્રેમને કોઈ ફાંસી-બંધન કહે છે; કોઈ તેને તલવાર કહે છે; કોઈ
તેને બરછી, બાણ અને તીર કહે છે અને કોઈ તેને વિચિત્ર ઢાલ પણ કહે છે. (૨૯)

પૈ મિઠાસ યા માર કે, શૈમ શૈમ ભરપૂર,

મરત જિયૈ, ઝુકતો ધિરૈ, બને સુ ચકનાચૂર. ૩૦

પરંતુ આ મારની મીઠાસ શૈમશૈમ ભરપૂર થઈ જાય છે! જે મારથી મરતો હોય તે જીવતો
થઈ જાય છે અને પડતો હોય તે સ્થિર-ટકાર થઈ, તે પ્રેમમાં ચકચૂર-તલ્લીન બની જાય છે. (૩૦)

પૈ એતો હૂં હમ સુન્યો, પ્રેમ અજૂઓ ખેલ,
બંખાણ ખાણ જહાં, દિલ કા દિલ સે મેલ. ૩૧

પરંતુ અમે એ પ્રેમ સંબંધમાં કેવળ એટલું જ સાંભળ્યું છે કે, પ્રેમ એક વિલક્ષણ ખેલ છે અને જ્યાં પ્રાણની ખાણ શાગી જાય છે, ત્યાં એ હૃદયનો હૃદયથી મિલાપ થાય છે. (૩૧)

સિર કાટો, છેદો હિયો, દૂક દૂક કરિ દેહુ,
પૈ યાકે બદલે વિહુસિ, વાહ વાહ હી લેહુ. ૩૨

રસખાનણ કહે છે કે, પ્રેમને બદલે મસ્તક કાપી નાખો, હૃદયને છેદી નાખો અને શરીરના ટુકડેટુકડા કરી નાખો; પરંતુ એના બદલામાં તમે હસીને 'વાહવાહ!' જ પ્રાપ્ત કરો. (૩૨)

અકથ કહાની પ્રેમ કી, બનત લૈલી ખૂબ,
દો તનહૂં જહૂં એક લે, મન મિલાઈ મહખૂબ. ૩૩

પ્રેમની કથા અવર્ણનીય છે. જેને એકમાત્ર ક્ષયલાએ જ સારી રીતે બણી છે. પ્રિયમાં મન મેળવવાથી જ્યાં એ શરીર પણ એક થાય છે. (૩૩)

દો મન ઇક હોતે સુન્યો, પૈ વહ પ્રેમ ન આહિ,
હોઈ જાએ દૈ તનહૂં ઇક, સોઈ પ્રેમ કહાહિ. ૩૪

એ મન એક થતાં સાંભળ્યાં છે; પરંતુ તે પ્રેમ નથી હોતો. જ્યારે એ શરીર એક થાય, તે જ સાચો પ્રેમ કહેવાય છે. (૩૪)

યાહી તેં સખુ મુક્તિ તેં, લહી બઝાઈ પ્રેમ,
પ્રેમ ભયે નસ બાહિં સખ, બંધે જગત કે નેમ. ૩૫

આ કારણથી પ્રેમે મુક્તિ વગેરે અધાંથી અધિક મહત્તા પ્રાપ્તિ કરી છે. પ્રેમ થયા પછી જગતના આધિલા અધા નિયમો દૂર થઈ જાય છે. (૩૫)

હરિ કે સખ આધીન પૈ, હરિ-પ્રેમ આધીન,
યાહી તેં હરિ આપુહી, યાહિ બડપ્પન દીન. ૩૬

ભગવાનને વશ અધા સંસાર છે; પરંતુ ભગવાન પ્રેમને આધીન છે, માટે જ ભગવાને સ્વયમેવ એ પ્રેમને મહત્તા આપી છે. (૩૬)

વેદ-મૂલ સખ ધર્મ યહ, કહૈ સખે શ્રુતિસાર,
પરમ ધર્મ હૈ તાહુ તેં, પ્રેમ એક અનિવાર. ૩૭

સર્વ શ્રુતિઓનો સાર એ છે કે, વેદોક્ત ધર્મ જ મૂળ ધર્મ છે; પરંતુ એનાથી પણ અધિક અનિવાર્ય પરમ ધર્મ એક પ્રેમ છે. (૩૭)

જદપિ જસોદા નંદ અરુ, ગ્વાલ બાલ સખ ધન્ય,
પૈ યા જગ મેં પ્રેમ કોં, ગોપી ભઈ અનન્ય. ૩૮

તો કે, યશોદાજી, નંદરાયજી અને સર્વ ગ્વાલબાલોનો પ્રેમ ધન્ય છે; પરંતુ આ વિશ્વમાં શ્રીગોપીજનો પ્રેમને કારણે અનન્ય થયાં છે. (૩૮)

યા રસ કી કછુ માધુરી, બિધો લહી સરાહિ,
પાવૈ બહુરિ મિહાસ અસ, અબ દુબે કો આહિ? ૩૯

શ્રીગોપીજનોના પ્રેમરસનું શોધકે માધુર્ય ઉદ્ભવજીને મળ્યું. જેની એમણે બહુ જ પ્રસંસા કરી, પણ હવે બીજું કોણ છે કે, જે એ માધુર્યને પ્રાપ્ત કરી શકે? (૩૯)

શ્રવણ, કીરતન, દરસનહિં, જે ઉપજત સોધ પ્રેમ,
શુદ્ધાશુદ્ધ વિભેદ તેં, દ્વૈવિધ તાકે નેમ. ૪૦

શ્રવણ, કીર્તન અને દર્શનથી મનુષ્યમાં જે ભાવ ઉત્પન્ન થાય છે, તેને જ પ્રેમ કહેવાય છે. શુદ્ધ અને અશુદ્ધ-એવા બેદથી તેના બે પ્રકારના નિયમ છે. (૪૦)

સ્વાસ્થ્યમૂલ અશુદ્ધ ત્યોં, શુદ્ધ સ્વભાવડનુકૂલ,
નારદાહિ પ્રસ્તાર કરિ, ક્રિયો ભહિ કો તૂલ. ૪૧

જે પ્રેમના મૂળમાં સ્વાસ્થ્ય રહેલો હોય છે, તેને અશુદ્ધ પ્રેમ કહે છે અને જે સ્વાસ્થ્યરહિત મૂળ સ્વભાવને અનુકૂળ હોય છે, તેને શુદ્ધ પ્રેમ કહેવામાં આવે છે. નારદજી આદિ મુનીશ્વરોએ આ પ્રેમનો પ્રસ્તાર આદિ કરીને તેની તુલના કરી છે. (૪૧)

રસમય, સ્વાભાવિક બિના સ્વાસ્થ્ય અચલ મહાન,
સદા એકરસ શુદ્ધ સોધ, પ્રેમ અહૈ 'રસખાન.' ૪૨

રસખાનજી કહે છે કે, જે રસમય (આનંદમય), સ્વાભાવિક, નિઃસ્વાસ્થ્ય, અચલ અને મહાન હોય છે, તથા જે એકરસ-નિર્વિકાર અને શુદ્ધ હોય છે, તે જ સાચો પ્રેમ છે. (૪૨)

ભતેં ઉપજત પ્રેમ સોધ, બીજ કહાવત પ્રેમ,
ભમેં ઉપજત પ્રેમ સોધ, ક્ષેત્ર કહાવત પ્રેમ. ૪૩

જેનાથી પ્રેમ ઉત્પન્ન થાય, તે જ પ્રેમનું 'બીજ' છે; અને જેમાં પ્રેમ ઉત્પન્ન થાય તે જ પ્રેમનું 'ક્ષેત્ર' કહેવાય છે. (૪૩)

ભતેં મનષત, પદત અરુ કૂલત, ફલત મહાન,
સો સળ પ્રેમ હિં પ્રેમ યહ, કહત રસિક 'રસખાન.' (૪૪)

રસિક-પ્રેમી રસખાનજી કહે છે કે, જેનાથી પોષિત થઈને હર્યોં હર્યોં રહે છે, વધે છે, ફળે છે, ફળે છે અને મહાન થાય છે, તે સર્વ પ્રેમ જ પ્રેમ છે. (૪૪)

વહી બીજ, અંકુર વહી, એક વહી આધાર,
હાલ, પાત, ફલ, ફૂલ સળ, વહી પ્રેમ સુખ-સાર. (૪૫)

એ પ્રેમ જ બીજ છે, એ જ અંકુર છે, અને એક માત્ર આધાર પણ એ જ છે, ઘણ, પાન, ફૂલ અને ફળ-એ સર્વે સુખના સારસ્વ પ્રેમ જ છે. (૪૫)

જો ભતેં, ભમેં બહુરિ, બા હિત કહિયત બેસ,
સો સળ પ્રેમ હિં પ્રેમ હે, જગ 'રસખાન' અસેસ. (૪૬)

રસખાનજી કહે છે કે, જે પ્રેમ જેનાથી અને જેમાં ઉત્પન્ન થાય છે તથા જેને કારણે તેને મદદતા મળી છે, તે સર્વ પ્રેમ જ પ્રેમ છે, અને જગત તે પ્રેમથી જ પરિપૂર્ણ છે. (૪૬)

કારજ-કારન-રૂપ યહ, પ્રેમ અહૈ 'રસખાન',
કર્તા, કર્મ, ક્રિયા, કરન, આપહિ પ્રેમ બખાન. (૪૭)

રસખાનજી કહે છે કે, આ પ્રેમ કાર્ય અને કારણરૂપ છે. કર્તા, કર્મ, ક્રિયા અને સાધન-
એ સ્વયં પ્રેમની પ્રશંસા કરે છે. (૪૭)

દેખિ ગઢર હિત-સાહબી, દિલ્લી નગર મસાન,
છિનહિં ખાહસા-ખંસ કી, ઠસક છોરિ 'રસખાન.' ૪૮

રસખાનજી કહે છે કે, મેં સ્વામિવને માટે વિધવ (બળવો) થતો નિહાળીને અને દિલ્લી
નગરને સ્મશાનવત્ સમજીને એક ક્ષણમાં જ આદ્યાશી પરિવારની મમતાનો ત્યાગ કર્યો. (૪૮)

પ્રેમ-નિકેતન શ્રીખનહિં, આઈ ગોવર્ધન ધામ,
લહૌ સરન ચિત ચાહિ કે, ગુગલ સરૂપ લલામ. ૪૯

૫૪ી પ્રેમ-ધામ શ્રીઠંદાવનમાં આવી ગયો. ત્યાં શ્રીગોવર્ધન ધામમાં આવીને શ્રીરાધા-
કૃષ્ણનાં સુંદર યુગલસ્વરૂપનું સરણ સ્વીકાર્યું અને ચિત્ત દઈને એ ભગવત્સ્વરૂપમાં પ્રેમ કર્યો. (૪૯)

તોરિ માનિની તેં હિયો, ફોરિ મોહિની-માન,
પ્રેમદેવ કી છબિહિ લખિ, ભયે મિયો 'રસખાન.' ૫૦

માનવતી પત્નીમાંથી મન મુક્ત કરીને અને મોહિની ઉપપત્નીના માનનો ત્યાગ કરીને
પ્રેમદેવ શ્રીકૃષ્ણચંદ્રની છબી જોઈને, રસખાનજી કહે છે કે, હું તેનો ભક્ત બની ગયો. (૫૦)

વિધુરા સાગરજ રસઃ ઈદુર મુલ ઘરસ સરસ 'રસખાનિ',
'પ્રેમવાટિકા' રચિ દુચિર ચિર હિય-હરખ બખાનિ. ૫૧

રસખાનજી કહે છે કે, મેં સં. ૧૬૪૧ ના શુભ વર્ષમાં રસની ખાણરૂપ આ સુંદર
'પ્રેમવાટિકા' (પ્રેમની ફૂલવાડી)ની રચના કરી છે; જે ચિરકાલપર્યંત રસિકજનોના હૃદયમાં નિવાસ
કરીને તેના હૃદયની પ્રશંસા કરશે. (૫૧)

અરપી શ્રીહરિ-ચરન-ગુગ-પદુમ-પરાગ નિહાર,
બિચરહિં યામેં રસિકવર, મધુકર-નિકર અપાર. ૫૨

શ્રીહરિનાં યુગલ ચરણારવિદના પરાગને જોઈને એ ચરણકમલમાં મેં આ 'પ્રેમવાટિકા'
અર્પણ કરી છે. જેમાં રસિકજનો રૂપી ભ્રમરસમૂહ યુગ્મસ્વ કરતા વિચરણ કરે. (૫૨)

(શેષપૂરન)

રાધા-માધવ સખિન સંગ, બહુરત કુંજ-કુટીર,
રસિકરાજ 'રસખાનિ' તહૈ, કૂજત કોઈલ કીર. ૫૩

પ્રેમવાટિકાની કુંજ-કુટીરમાં સખીજનો સાથે શ્રીરાધા-કૃષ્ણ યુગલ સ્વરૂપ વિહાર કરે છે
અને 'રસખાનજી' રૂપી રસિક ભક્તજનો ત્યાં કોડિલા અને શુક સ્વરૂપે કૂજન કરી રહેલ છે. (૫૩)

- ભક્તિપ્રિય

*સંસ્કૃતમાં-સાગરની સંખ્યા ૪ (ચાર) માનવામાં આવી હોવાથી 'પ્રેમવાટિકા'ની રચના સં. ૧૬૪૧માં
(સરણમનપશ્ચાત્ તરત જ) અર્ધ હોવાનું નિશ્ચિત છે.

(નુઓ : 'નાગરીપ્રચારિણીપત્રિકા' વર્ષ : ૧૦, અંક : ૧, પૃ. ૬૦ ઉપરનો શ્રી. અરેકૃષ્ણનો લેખ)

श्रीमद्भिद्वेष प्रलुचरण कृत 'गुप्तरस' की टीका

श्रीकृष्णाय नमः । अथ श्रीमत्प्रलुचरण श्रीगुसांशु कृत 'गुप्तरस' के श्लोकार्थ, संस्कृत में जो अक्षर हैं तिनके शापनाथ बाबा में लिख्यतु है।

एक सभे श्रीठाकुरण पांच वरस के अपुने वयस्य के संग जेलत नम्रभक्तन के आँगन में पधारे. वा समय एक भक्त जो गूढभावभावित हते, तिनने श्रीठाकुरण के आँखन ते न्यारे करि अपुने अंक में भरि जोह भिठाय समस्या में जाल अवस्था में प्रौढ लीलावस के लोग करिबे की शिक्षा करत हैं.

पयोदध्याभिक्षाभिनवघृतगोधूमचण्डके-

क्षवैरक्षुष्टैर्विधिधरसभोजन्यं त्वतिमुदा ।

विधायामायांथार्थायितनुचिरपात्रेषु रक्षास

प्रियं प्राप्यांकस्थं किमपि समवाच्यत्प्रियतमा ॥१॥

टीका : इध अरु इही तथा मनोहर के लडुवा तथा सध के ताये घृत तथा गेहूँ और अना और धुरा-ये सप्त पदार्थ अति उत्तम प्रकार से, जो हमारे जनार्थ अरु विविध रस भोजन से, अंतःकरणपूर्वक अंशत के विषे, जो रस के उचित, जैसे पात्र तामें संपादन करिके धरे हैं. ताके हे प्रिय! हमारे पोषक जो तुम, से विविध रस से भोजन करे. (१)

अस्मदीय पदार्थानां भोगः कार्यस्त्वयैव हि ।

अन्यथा मार्गभर्यादा नक्षत्यभोजनोत्थन ॥२॥

टीका : हमारे जो होय प्रकार के पदार्थ-एक तो देहसंबंधी सर्वांग में भुज, नयन, लुकुटी, कपोल, वक्षस्थल, उरोज, हस्त आदि अवयव हैं, और दूसरे गृहसंबंधी नवनीत, इध, इही आदि सामग्री, ताके तुम ही भोग करे. अन्यथा कहत न करोगे तो मार्ग की भर्यादा जो 'पुष्टिमार्गीय एवन की समर्पी जो वस्तु, ताके हम अशोभत हैं अरु ता करि हम पुष्ट होत हैं', ऐसी जो तुम्हारी प्रतिज्ञा, हे अंभोजनोत्थन (कमलनयन) ! वह भर्यादा नष्ट कहत नाश होयगी. (२)

धतरौपयोगशंकावदहनसुतप्तमंतरसमाकम् ।

स्वांगीकृतिनवजलदेः शिशिरय गोपीजनप्राण ॥३॥

टीका : तुम्हारे भोग वस्तु के धतर भोग करे, ऐसी जो शंकाइप दावानल, ता करि हमारे अंतःकरण तप्त लये हैं, तिनके तुम्हारी सामग्री भोग अंगीकार इपी जो नवीन

मेघ, ता करि हे गोपीजनप्राण ! शीतल करे. (3)

लोकविगीतं नाथ स्फुटमस्माब्जस्तथाकृतं तस्मात् ।
बालकलीलाप्रोदथा त्वयैव संपादनीयः सः ॥४॥

टीका : हे नाथ ! लोगन विषे जे निहित ताकों हुम स्फुट कियो कहत प्रगट कियो ताते तुमहु बालक की लीला मध्य जे किशोर लीला ता करि रस संपादन करनो. (४)

कार्या व्यावृत्तिरन्येषां यदास्माब्जस्तदा तथा ।
यतनीयं समुद्वेगबाललीला भिवाचर ॥५॥

टीका : अन्य जे गोपीपतिन के कार्य के उद्यम जे कृषि-गोचारण समे ता बिरियां हुम तुम्हारे गुलावने कें यत्न करेगे. तुमहु ता समे निर्भर्याद आचरण करेगे. (५)

रजतभयेऽप्यतिसूक्ष्मे पात्रे नवनीतमतिनवं निहितम् ।
शोणु शिकधे मुक्तागुच्छवति त्वं शृङ्गाण्डम् ॥६॥

टीका : रूपे के पात्र, न बहुत छोटी न बहुत बड़ी, तामें सध के उत्पन्न भयो सो नवनीत, सो बाल पाट के जे छीका मुक्तागुच्छसंयुक्त, ता पर धरि राख्यो है, सो तुम ही अहणु करेगे.

या करिके मध्या भक्त जे कसूणी साड़ी, मुक्ता के आभरण संयुक्त है, तिनके रसअहणु की समस्या करत है. (६)

तन्निकटे त्वस्ति सिता हैमे पात्रे तदग्निमे शिकधे ।
सुश्रुतं पयः सितैलाकपूरयुतं च पेषं तत् ॥७॥

टीका : वा के निकट सुवर्ण के कटोरा में मिश्री है, ता संयुक्त पिछले श्लोक में कही जे नवनीत, ताकों अरेगो. अरु ता के निकट के छीके वा पर जोहोत ओटयो ह्म, मिश्री-ध्रुवाययी-गरास संयुक्त धरयो है, ता के तुम पान करे.

वा करि प्रगल्भा जे ज्ञातयोवना भक्त, तिनके रसअहणु की समस्या करत है. (७)

दुग्धमध्ये हैमपात्रं सूक्ष्मं निहितमस्ति मे ।
सुभेन तेन तत्पानं कुरु मत्प्राणवद्वल ॥८॥

टीका : जपर के श्लोक में कही सो ह्म, ता के मध्य सुवर्ण की छोटी कटोरी धरी है, तासों हे हुमारे प्राणवद्वल ! वा ह्म कें सुभेन तुम पान करे.

या करि पहेले श्लोक में कहे जे भक्त, उनके अधरपान की समस्या करत है. (८)

शृतदुग्धमोदकानि प्रियैतदुपरिस्थ कनकमयपात्रे ।
निहितानि सति मुद्धितान्यस्माकं त्वत्करस्पर्शात् ॥९॥

टीका : जपर कही जे ह्म, ता पर सुवर्ण के पात्र में ओटयो ह्म के जे जोवा

ता के लडुवा धरे हैं. वा को हे प्रिय ! तुम्हारे कर को स्पश होयगो. तब हमारे सुभकारी होयगो.

या करि वा ही लक्ष्म के कुचस्पर्श की समस्या करत है. (९)

मुमुक्षुतमाह्विषदुग्धघटाऽपि तन्निकटमेव च शिक्यगतः प्रिय ।
रुचिरं मृष्टमयपात्रपिधानयुक्तव मुष्पांशुसंगमभिमन्थति ॥१०॥

टीका : आधी लॉति ओटयो महिष को दूध, ताके घट, सो हे प्रिय ! वा ही के निकट ले स्थान पाट को छोडा, ता पर दूसरो रुचिर मृष्टमय कटोरा, सो ढॉपि राख्यो है, सो तुम्हारे ही सुभकमल के संगम की धरणा करत है.

या करि स्थामवस्त्रपरिधान सेां ले कोर्ध मुग्धा लक्ष्म, तिनके सर्वांग के सुस्वाद रस तथा गलस्थल युग्मन के रसग्रहण की समस्या करत है. (१०)

येकैकं त्वन्मुष्पांशोले यथा भाति तथा कृतम् ।
तद्विदस्ति नवे शिक्येककंटीपीनभोदकम् ॥११॥

टीका : वा ही के आगे अग्रिम छोडा पर कर्कटीपीन (सकरटेटी के पीन) के लडुवा धरे हैं, सो येक येक करिके आछो लगे या ही प्रकार सेां आपके श्रीमुष्म मेां धरेा.

या करि अज्ञातयौवना ले मुग्ध लक्ष्म, तिनके अनकुचित ले पीनरस, ताके ग्रहण की समस्या करत है. (११)

सितालवंगकपूरं राद्विभिरातिक्रम्युत्तमम् ।
नवमृष्टमयपात्रेऽस्ति दधिशिक्येऽतिचित्रिते ॥१२॥

टीका : भित्री अरु लवंग, अरु परासाहिक सेां मिलाये ले दधि सेा नवीन मृत्तिकापात्र मेां धरिके अतिविचित्र (रंगभेरंगी) छोडा पर राख्यो है.

या करि त्रिशुलुरसयुक्त ले प्रौढा लक्ष्म, तिनको रस ले किंचित् भाटो-मधुरो है, ताके ग्रहण के सूचन करत है. तहां त्रिशुलु-सेा भित्री सात्त्विक, लवंग तामस, अरु परास राजस गुण के सापक हैं. (१२)

केवलैनेव दध्ना यदासिक्तं मुमुक्षुतं पयः ।
तद्व्यतिथनं स्वादु शिक्येऽस्ति नवकांथने ॥१३॥

टीका : केवल दधि सेां नभाये ले अति ओटयो दूध, ता करि सिद्ध भये ले धनीसूत सुस्वादु दही, सो नवीन सुवर्षातंतु के छोडा पर धरयो है.

या करि ज्ञातयौवना ले शुद्ध प्रगल्भा लक्ष्म, नरीवस्त्रसंयुक्त तिनको रस ले केवल गोरसतुल्य, ताके ग्रहण की शिक्षा करत है. (१३)

गोधूमयष्टकपिष्टाभिक्षा भिक्षा विनिर्मिता रस्याः ।
ते सत्यर्थाः पीतप्रवेतश्यामेषु शिक्येषु ॥१४॥

टीका : गेहूँ और यना के पिष्ट, तथा ताते दुध में अर्ध डारे ते' ने इटयो दुध, ता करि अनी ने अति उत्तम कामल रसाल ने सामग्री पदार्थ, सो पीत प्रवेत श्याम छीका पर धरे हें.

या करि त्रिगुणु लक्षत, ने पीत लहेंगा, प्रवेत साडी जेव' श्याम क'युकी आदि वस्त्र-परिधानसंयुक्त है, तिनके ग'दस्थल, अधर, कुच ने कामल अंग. तिनके रसास्वाद की शिक्षा करत है. (१४)

निगदित शिक्यसमूहांतरण्ये' पद्मरागमय शिक्ये ।

तत्र स्तः शिपरियोषु नवमृष्टमयपात्रयोर्नाथि ॥१५॥

टीका : उपर कहे जैसे ने छीका के समूह, ताके मध्य ने लाल मल्लिमय छीका, ता पर होय प्रकार के सिपरन-जेक अत्यंत भिष्ट, जेक किंचित् भाटो, सो हे प्राणनाथ ! नवीन सुत्तिका के पात्र में धरी राख्यो है.

या करि मल्लि के आलस्य संयुक्त ने होय प्रकार के लक्षत-जेक अज्ञातयौवना मध्या केवल भिष्ट रसमय, ने मे' श्रीकापुरल को अम नहीं होत, अरु जेक सातासात यौवना मध्या ने किंचित् भाटे रसमय, लके रसअदृश्य में थोड़ी सो अम होत है, जैसे ने लक्षत तिनके रसास्वाद को सूचन करत है. (१५)

संधितमूलाद्रं कं जंभीरुक्षलः सत्करीरादिः ।

अतिरोच्यकस्तद्विश्रिभशिक्येऽस्ति नवांशुदश्याम ॥१६॥

टीका : आम तथा अहरक तथा नवीन नींबू तथा जिजोरा तथा सुंदर टेंटी आदि संधाने' ने अतिरोच्यक, सो हे नवधनश्याम ! ताके अश्रिम छीका उपर धरे हें.

या करि भौंडा लक्षत ने विचित्र लावसंयुक्त, मानवती, तिनके रसअदृश्य की समस्या करत है. (१६)

उच्चैः स्थितशिक्यानामथ'भनेकप्रसाधनानि परम् ।

पीठालूपललांडान्यस्त्राणिः संति निहितानि ॥१७॥

टीका : अति उच्चस्थित ने छीका, ताकी प्राप्ति के लिये हम अनेक साधन करि पट्टा तथा उल्लूभल तथा और लौंड राखे हें.

या करि यह जताये ने जे लक्षत गृहादिक की मर्यादा सों दुष्प्राप्य हें, तिनकी प्राप्ति ल द्वारा जेगि अनायास सों होय जैसे हम अनेक मध्या तत्पर करि राखे हें. ता उपाय करि वह रस के अंगीकार करे. (१७)

पदसमयापदार्थाः संयावाश्चातिचित्र इपांताः ।

योग्यस्थाने निहितानि महानसे संति भूयिष्ठा ॥१८॥

टीका : पट्टस जे कट्ट, अमल, तिकत, लवण, कषाय और मधुर-यह जे पट्टस पदार्थ और संयावे (भीर, हडी, हारि, सभड़ी) आदि विविध सामग्री जे योग्य स्थान, जे पाठ्याला, तहें लूमि पर धरि हें.

या करि श्रीठाकुरल सत्रि संकेत करि कहें और ठौर पधारै, तत्संभंधी उत्पन्न लये जे अंडिता के मान, जैसे जे निर्गुण ब्रह्म, तिन के पट्ट प्रकार के रस की समस्या करत है. लूमि पर धरिवे के अभिप्राय यह जे सभड़ी लूमि पर अग्नि के पास रहत है. तब तापी सुस्वादु रहत है. और मान डू तातो होत है. (१८)

क्रियद्वयि ते पदार्थस्त्विदंकेलोभ्या मे ।
त्रं लुंक्ष्वाशु सराभा वयस्यवृद्धैः सङ्गागत्य ॥ १९ ॥

टीका : जेक तुम्हारे लोग लायक जे सभ पदार्थ, ताके हम कहें ताँछ वर्यून करे ? सो सभ पदार्थ तुम ही शीघ्र लोग करे, अरु वयस्य जालक अपने तथा जलदेवजू के संग ले आवनो.

या करि यह जनाये जे जैसी सामग्री के लोग समय वेद मर्यादाइप जे जलदेवल संग होय, अरु द्वार के जाहर ठाढ़ रहे तो औरन के यह बीला के सम्यक् ज्ञान न होय, अरु छोटे जालक जे रहस्यबीला ते अज्ञात है सो तो अंतर के वृत्तांत तो कछु जने जे नौही, अरु हमरे-तुम्हारे भीय उत्तर-प्रतिउत्तर के सहाय होय रहेगे. (१९)

अवभेषाभिला नोतःसदनेषु त्वदाशया ।
संपाद्य निहिताः सति पदार्थां जावसुंहर ॥ २० ॥

टीका : या प्रकार के समग्र पदार्थ, जे हमसें हमारे घरन में तुम्हारी आस करिके हे जावसुंहर ! अनेक पदार्थ संपादन करि धरे हें.

या करि यह जनाये जे हे जावसुंहर ! हमारे प्रत्यंगइपी जे सभ पदार्थ, सो लोअन तथा स्नानादिक तथा शृंगार-वस्त्र धारण में तुम्हारी आस धरि पोषण अरु सिद्ध करि राखे हें. अरु काहु के अपयोग नहीं लये है. लरधार के लोग तो अंतरंग भाया के विलास करि लोक प्रतीति मात्र ही है, न तु साक्षात् लोग है. ताते तुम जेगि ही अंगीकार करे. (२०)

वत्सविभोक्तं तोकप्रपीडनाद्यनयवृत्तमिव आत्र ।
संकेतमस्मदीयं संज्ञापयितुं स्वया कार्यम् ॥ २१ ॥

टीका : वत्स के असमय जेव देने, अरु छोटे छोटे जे जालक तिनके पीडन करि रोदन करावावना-धियादि जे उच्छ्रंखल बीला तुम्हारी जे ताके हमारे-तुम्हारे जे संकेत ताके ज्ञापनार्थ वे ही उच्छ्रंखल बीला के आचरण करने. (२१)

अस्माभिरभ्युपालंभ संवादेवस्तदर्थकः ।
भातुपाहाण्णनिकटे प्रक्षयाभस्त्वां तदापिथ ॥ २२ ॥

टीका : हम तुम्हारे अर्थ उपाखंड होय तैसे ही श्रीमातृरक्ष के निकट आनि कहेगे. और उहाँ हू या भय करि हमको तुम्हारे दर्शन होयेंगे. (२२)

अधिकं किं तु वक्तव्यं यथैवास्मभनोरथः ।
पूषुर्लवत्ययं नाथ तथा पश्यत्वमातुराः ॥२३॥

टीका : अधिक हम कडा विज्ञप्ति करे ? जैसे हमारे अनोरथ हैं, सो हे प्राणनाथ ! न प्रकार पूषु होय तैसे ही अवश्य तुम आचरषु करे. (२३)

यद्यपि लोकविगीतं प्रणेशसूनोस्तवेदृशं करणम् ।
निजजनहृदयानंदप्रदायकत्वाद्दतिस्त्राध्यम् ॥२४॥

टीका : प्रणेशसूनो ! तुम्हारे जे आचरषु जे यद्यपि ले गन में निहित है; परंतु तुम्हारे जे निजजन तिनके तो हृदय के आनंददायक अरु अत्यंत स्तुति करवे जोग है. (२४)

धृत्वं स्वीयगृहोऽपि यं क्व यं तात्करञ्चुन आद्यभीष्यंते ।
ज्ञात्वा स्नेहातिरयात्सवे' त्वां लालयिष्यंति ॥२५॥

टीका : या प्रकार अपने गृह विषे हू कोछि कोछि समय तुम उच्छ्रंभल लीला के आचरषु करोगे तब तुम्हारे तौछि जोहोत अज्ञात भालक अनिके सभ कोछि अत्यंत स्नेह करेगे अरु जोहोत लडावेगे. (२५)

अस्मदीयमभिलं लवदीयं तेन तत्र ब्रह्मते न परस्य ।
कस्य चिन्नतु लविष्यति शुद्धिर्दोष धृत्यमलवस्तुनिसर्गात् ॥२६॥

टीका : हमारे जे समग्र हैं सो सभ तुम्हारे हैं, न तु पराये हैं. तातें याके ब्रह्म करिबे में और काहुकों शुद्धि होष नहीं होयगो. और वे वस्तु स्वभाव ते' निर्दोष ही है. (२६)

न ज्ञास्त्यत्यन्योऽपि प्रियावयोआरक्षरेल्लुरेष परम् ।
श्रीविदुषोऽतिगोप्यं सर्वभिर्भवं वेत्ति वृत्तांतम् ॥२७॥

टीका : या वृत्तांत के और कोछि जनत नाँही है. हे प्रिय ! तुम्हारे अरक्षारविंद की रेलु पर जे ये श्रीविदुष (यं द्रावलील), सो ही यह सभ गोप्यं वृत्तांत जनत हैं. (२७)

धृति प्रियतमा मुष्पपन्नवथो भधु ।
रसायणभिवापीय तथैव प्रलुराचरत् ॥२८॥

टीका : या प्रकार के प्रियतमा—प्रबलकतन के जे बूध, तिनके मुष्पकमल के भधुर वचन जे रसायनतुल्य, ताके सुनिके श्रीठाकुरलने वा ही प्रकार आचरषु कियो.

तहाँ रसायनरूप वचन कहे ताके अभिप्राय यह जे रसायन है सो पुरुषार्थदायक है. अरु धनिके वचन-रसायन सो हू साक्षात् भालकदशा में श्रीठाकुरल के रसोद्गोष भयो ताते. (२८)